ओंतत्सत् ।

धर्म्मकर्म्मदीपिका ।

दशमहाविद्यासिद्ध सर्व्वानन्ददेव (सर्व्वविद्या) कुलोत्पन्न

महामहोपाध्याय महामहाध्यापक श्रीजगदाचरण

तर्कचूड़ामणि शर्म्मा द्वारा विरचित ।

भारतधर्म्मसिण्डिकेट लिमिटेड के

शास्त्रप्रकाशन विभाग द्वारा

प्रकाशित ।

—:*:—

काशी ।

संवत् १९८१ विक्रमीय ।

प्रथमावृत्ति २०००] सन् १९२४ ई० [मूल्य ॥) आना ।

rinted by H. N. Bagchi, at the Bharat Dharma Press, Benares.

भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड ।

यह संस्था हिन्दूजातिके सब प्रकारके अभ्युदयके लिये दस लाख रुपयेके मूलधनसे स्थापित की गई है। इसके हिस्से २५) ५०) और १००) रुपयेके रक्खे गये हैं, जिससे यथेष्ट लाभ होगा ऐसी दृढ़ आशा है। हिन्दू नरनारी मात्रको इसके हिस्सेदार बनकर देश और धर्मकी सेवामें योग देना उचित है। विशेषतः वर्णाश्रम-संघके मेम्बरोंको तो अवश्य ही इसके हिस्सेदार बनना चाहिये। हिस्सेदार बनने और पत्रव्यवहार करनेका पता—

सेक्रेटरी—भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड,
अगस्तगंज, स्टेशनरोड, बनारस

भारतधर्म

तथा

महाशक्ति।

इन नामोंमेंसे प्रथम नामका हिन्दी साप्ताहिकपत्र दूसरे नामका अंग्रेजी साप्ताहिकपत्र ये दोनों काशीसे समस्त सनातनधर्मावलम्बियोंके मुखपत्ररूपसे प्रकाशित हैं। इनको क्रमशः दैनिक करदेनेका विचार है। भा... वार्षिक मूल्य ३) और महाशक्तिका वार्षिक मूल्य ६) सहृदय स्वदेशहितैषी हिन्दू नरनारी मात्रको इन पत्रोंका ग्राहक होना उचित है। वर्णाश्रम-संघके प्रतिनिधियोंको तो इनका ग्राहक बनना चाहिये, क्योंकि ये उस संघके मु...

मैनेजर—सम्वादपत्रविभाग,
भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड,
अगस्तगंज, स्टेशन रोड, .

ओंतत्सत्।

धर्म्मकर्म्मदीपिका।

दशमहाविद्यासिद्ध श्रीसर्व्वानन्ददेव (सर्व्वविद्या) कुलोत्पन्न-
महामहोपाध्याय महामहाध्यापक श्रीअन्नदाचरण
तर्कचूड़ामणि शर्म्मा द्वारा
विरचित।

—:o:—

भारतधर्म्मसिण्डिकेट लिमिटेडके
शास्त्रप्रकाशन विभाग द्वारा
प्रकाशित।

———

काशी।

सं० १९८१ विक्रमीय।

मूल्य ॥)

श्रीयुत एच. एन्. बागचीके प्रबन्धसे—
भारतधर्म्मसिण्डिकेटके भारतधर्मप्रेसमें मुद्रित।

विज्ञापन ।

—:※:—

वर्णाश्रमधर्म्मावलम्बी आर्यजातिमें इस कराल कलिकालमें भी कर्म्मकाण्डका प्रचार कम नहीं है । केवल विधिपूर्वक कर्म्म करनेसे कर्म्मका फल अवश्य होता है, परन्तु कर्म्मकर्त्ता और कारयिता दोनों ही यदि कर्म्मविज्ञानको और धर्म्मविज्ञानको जाननेवाले हों, तो कर्म्म धर्म्मपर आस्था दृढ़ हो जानेके कारण विशेष फलकी प्राप्ति हुआ करती है । विशेषतः आजकलके कर्मकाण्डी विप्रगण प्रायः न मंत्रार्थ जानते हैं और न कर्मविज्ञानके ज्ञाता होते हैं अतः वे यदि कर्म्म और धर्म्मका विज्ञान कुछ जान सकेंगे, तो उनके द्वारा कराये हुए कर्मका महत्त्व कुछ विशेष अवश्य हो जायगा इसीको लक्ष्यमें रखकर यह ग्रन्थ मेरे परमपूज्य गुरु महाराजने बनाया है । यदि आजकलके कर्म्मकाण्डी और अन्यान्य सनातनधर्म्मावलम्बी इससे लाभ उठावेंगे तो परिश्रम सफल समझा जायगा ।

भारतधर्म्म सिण्डिकेट नामक कम्पनी जो दस लाखके मूलधनसे रजिस्टरी होकर खोली गयी है वह वर्णाश्रम धर्म्मावलम्बियोंकी स्वजातीय संस्था है, उसके शास्त्र-प्रकाशन-विभाग, प्रेसविभाग, बुकडिपोविभाग आदि कई विभागोंमेंसे

शास्त्रप्रकाशनविभागका यह प्रधान लक्ष्य है कि वर्णाश्रमधर्म्मा-वलम्बियोंका कल्याण तथा जगत्में ज्ञानज्योति विस्तारके लिये प्रकाशित और अप्रकाशित वेद तथा वेदसम्मत शास्त्रीय ग्रंथों-को नियमित प्रकाशित किया जाय। सिण्डिकेटके इस शुभ उद्देश्यमें सहायता देनेके अर्थ श्रीगुरुमहाराज द्वारा प्रणीत अनेक शास्त्रीय ग्रन्थ क्रमशः प्रकाशित होते रहेंगे।

इस ग्रन्थके रचयिता श्रीगुरुमहाराजकी आज्ञानुसार इस पुस्तकका स्वत्वाधिकार भारतधर्म्मसिण्डिकेट लिमिटेड काशीके शास्त्रप्रकाशनविभागको दिया जाता है।

निवेदक

गुरुपूर्णिमा
सं० १९८१ विक्रमीय

विन्ध्येश्वरीप्रसाद शास्त्री,
महामण्डल भवन काशी।

प्रस्तावना।

कर्मोपासनाज्ञानात्मकेषु सत्स्वपि वेदस्य काण्डत्रयेषु कर्म-काण्डेन महिष्ठः सम्बन्ध आर्याणाम्। आगर्भाधानात् चिताऽऽरोहणं यावत् सर्वे एव संस्काराः कर्मकाण्डस्यैवान्तर्भवन्ति। आर्यजातेरस्तित्वरक्षणदक्षाणां सदाचाराणाञ्चाधार भूतः कर्मकाण्ड एव। उपासनायां ज्ञाने वा विहितसमुचित-समुन्नतिशालिनोऽपि महात्मानः ऋते कर्मकाण्डात् क्षणमपि स्थातुं न शक्नुवन्ति। यथाऽभिहितं भगवता श्रीकृष्णेन गीतायाम्।

नहि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः। इति।

अनेन प्रमाणेन प्रत्यक्ष सिद्धं कर्मकाण्डमहत्त्वम्। किन्तु साम्प्रतं हि कालप्रभावेण अन्यकारणेन वा कर्मकाण्डविपश्चित्सु क्रिया-सिद्धांशज्ञानमेव यथाकथञ्चित् समुपलभ्यते। किमिति कर्मणो वैज्ञानिकं स्वरूपं, के वा तस्य सञ्चालकाः, तेन धर्मस्य च कीदृशः

सम्बन्ध इत्यादिविषयविज्ञानविदां विरलत्वात् सम्प्रति केचन यथोचितं न श्रद्दधते तत्। अत एव मया देववचनं शरणीकृत्य हिताय कर्मकाण्डविदुषां प्रस्तुतमिदं पुस्तकम्। एतेन यदि आर्यजातेः प्राणभूतानां कर्मकाण्डिनामल्पोऽप्युपकारः सम्भवेत्त-दाऽहमात्मानं सफलपरिश्रममवगच्छेयमिति शिवम्।

श्रीअन्नदाचरण देव शर्म्मा।

धर्म्मकर्म्मदीपिका

की

विषयाऽनुक्रमणिका ।

ओंतत्सत् ।

धर्म्मकर्म्मदीपिका

मंगलाचरणम् ।

धन्यासि या समधिरुह्य रजोमृगेन्द्रं
तेनाहतं विजयसे च तमःसुरारिम् ॥
हे धर्मधात्रि भयहारिणि कर्मरूपे !
मातस्त्वदीयचरणाम्बुजमानतोऽस्मि ॥ १ ॥

शङ्खं गदाञ्च कमलञ्च तथा रथाङ्गम्
एतन्निजायुधचतुष्टयमादधाना ॥
मातस्त्वमेव विनताय यथाऽधिकारम्
वर्गञ्चतुर्विधमिह प्रददासि नित्यम् ॥ २ ॥

हे धर्म्म-कर्म्म-रूपिणि ! जगद्धात्रि ! आपके चरण कमलोंमें बार बार प्रणाम है। आप तमोगुणरूपी असुरको अपने बाहन सिंह द्वारा वशीभूत करके रजोगुणमय पशुराजपर आनन्द पूर्वक आसीना होकर काम, अर्थ, धर्म्म और मोक्ष रूपी गदा, शङ्ख, चक्र, पद्ममय चतुरायुधको धारण करती हुई अपने अनादि अनन्त सृष्टिप्रवाहको सदा धारण करती हैं ॥ १-२ ॥

सृष्टिप्रवाहमखिलं तमनाद्यनन्तम्
यत् त्वं जगज्जननि ! धारयसे चिराय ॥
ज्ञातुं ह्यपारमहिमानमनस्त्वदीयं
देवा महर्षिपितरोऽपि न पारयन्ति ॥ ३ ॥
धर्मस्य कर्मण इहास्ति च यन्महीयो
दुर्ज्ञेयमद्भुतमिदं निखिलं रहस्यम् ॥
चेतोलयं नहि विधाय तवांघ्रिपद्मे
कश्चित् पुमान्न जगदम्ब ! विवोद्धुमीशः ॥ ४ ॥
कुर्वन् विशुद्धचरणं शरणं वरेण्यं
मातस्तवैव वचनानि समाश्रयंश्च ॥
सृष्टि-स्थिति-प्रलय-कारक-धर्म-कर्म-
तत्त्वं हिताय जगतः परिवर्णयामि ॥ ५ ॥

आपकी अपार महिमाको ऋषि, देवता और पितर कोई भी हृदयङ्गम करनेमें समर्थ नहीं हैं, इसका प्रधान प्रमाण यह है कि, कर्म्मरहस्य और धर्म्मरहस्य दुर्ज्ञेय है ॥ ३ ॥ विना आपके चरणोंमें अन्तःकरण लीन किये कोई भी कर्म्मधर्म्म-रहस्य हृदयङ्गम करनेमें समर्थ नहीं हो सकता है ॥ ४ ॥ आपके वचनोंका आश्रय लेकर जगत्-कल्याणकी वासनासे जगदुत्पादक कर्म्म और जगद्धारक धर्म्मका-रहस्य वर्णन करनेकी सद्वासनासे आपके चरण-कमलोंमें शरणागत हुआ हूं ॥ ५ ॥

प्रस्तावना ।

श्रीगिरिजापतिपीठस्वरूपे पुण्यतीर्थे आनन्दवननामनि श्रीकाशीधामनि अपारलीलायाः पुण्यसलिलायाः त्रितापहारिण्याः जाह्नव्यास्तीरे जगत्कल्याणरताः तपोनिरता महात्मानो लोके कर्म-धर्म-रहस्य-प्रचारार्थं परस्परप्रश्नोत्तरेण ग्रन्थरत्नमेतद् आविर्भावयाञ्चक्रिरे । समाधाता तु केवलं भगवद्वचनमेव शरणीकृत्य सर्वानपि प्रश्नान् समादधदिति ।

प्रश्नः—

ननु सृष्टि-स्थिति-प्रलयानां हेतु-
भूतस्य कर्मणः किं वैज्ञानिकं स्वरूपमिति ?

एक समय पुण्य-तीर्थ आनन्दवन गिरिजापतिपीठस्वरूपिणी काशी नगरीमें पुण्य-सलिला त्रिताप-हारिणी जाह्नवीके तटपर कुछ निवृत्तिसेवी जगत्-हितार्थ तप-निरत महापुरुषोंने एकत्र होकर जगत्में कर्म्म और धर्म्मका रहस्य-प्रचार करनेके अर्थ परस्परमें प्रश्नोत्तरकी रीतिसे इस ग्रन्थ-रत्नका आविर्भाव किया था और उत्तरदाताने केवल भगवद्-वचनोंके द्वारा ही सब प्रश्नोंका उत्तर देना उचित समझा था ।

प्रश्न—

सृष्टि-उत्पादक तथा सृष्टि-स्थिति-लयकारक कर्म्मका वैज्ञानिक स्वरूप क्या है ?

समाधानम्—

शक्तिगीतायां निजमुखेनैव जगज्जननी
ब्रह्ममयी महामाया देवैर्जिज्ञासिता कथयति—

स्वभावात् प्रकृतिर्मे हि स्पन्दते परिणामिनी ।
स एव स्पन्दहिल्लोलः स्वभावोत्पादितो मुहुः ॥
सदैवास्ते भवन् देवाः ! स्वरूपे प्रतिविम्बितः ।
तस्मान्मम प्राकृतानां गुणानां परिणामतः ॥
अविद्याऽऽविर्भवेन्नूनं तरङ्गैस्तामसोन्मुखैः ।
सत्वोन्मुखैश्च तैर्देवाः ! विद्याऽऽविर्भावमेति च ॥
तदाऽविद्याप्रभावेण तरङ्गाणां मुहुर्मुहुः ।
आघातप्रतिघाताभ्यां जलैःपूर्णे जलाशये ॥

उत्तर।

जगज्जननी ब्रह्ममयी महामायाने शक्तिगीतामें देवताओंके पूछनेपर निज-मुखसे कहा है किः—

मेरी प्रकृति स्वभावसे होकर परिणामिनी होकर स्पन्दित होती है। हे देवगण ! वही स्वभावजनित स्पन्दनका हिल्लोल सदा ही स्वरूपमें बार बार प्रतिफलित होने लगता है, अतः मेरी प्रकृतिके गुणपरिणामके कारण, तमकी ओरके तरङ्गसे अविद्या और सत्वकी ओरके तरङ्गसे विद्या प्रकट होती है। उस समय अविद्याके प्रभावसे बारम्बार तरङ्गोंके आघात प्रतिघात द्वारा,

अगण्यवीचिसङ्घेषु नैकवैधव्वीचिवत्।
चिज्जडग्रन्थिभिर्देवाः ! स्वत उत्पद्य भूरिशः॥
जीवप्रवाहपुञ्जोऽयमानाद्यन्तो वितन्यते॥
ममैवास्ति स्वरूपं हि कर्म्म पीयूषपायिनः!।
वेदा वदन्ति कर्म्मास्ति ब्रह्मसारूप्यभागिति॥
सर्व्वद्वैतप्रपञ्चोऽयं कर्म्माधीनोऽस्त्यसंशयम्।
आब्रह्मस्तम्बपर्य्यन्तं दृश्यजातमथाखिलम्॥
ब्रह्माण्डान्तर्गतं सर्व्वं वहते कर्म्मनिघ्नताम्।
अव्यक्ताया दशायाश्च देवाः! व्यक्तदशोद्भवे॥
कर्म्मैव कारणं वित्त कर्म्मायत्तमतोऽखिलम्।
अतः कर्म्माधिकारोऽस्ति सर्वमूर्द्धन्यताश्रितः॥

जलपूर्ण जलाशयके अगणित तरङ्गोंमें अनेक चन्द्रबिम्बके प्रकाशके समान, हे देवगण ! स्वतः ही अनेक चिज्जडग्रन्थि उत्पन्न होकर अनादि अनन्त जीवप्रवाहका विस्तार करती है।

हे देवतागण ! कर्म्म मेरा ही स्वरूप है। कर्म्म ब्रह्म-स्वरूप है ऐसा वेद कहते हैं। समस्त द्वैतप्रपञ्च और आब्रह्मस्तम्बपर्य्यन्त समस्त दृश्यसमूह निःसन्देह कर्माधीन है। ब्रह्माण्डान्तर्गत सब ही वस्तु कर्म्मके अधीन हैं। हे देवगण ! अव्यक्त दशासे व्यक्त होनेमें कर्म्म ही कारण है, कर्म्मके ही अधीन सब कुछ है, इसलिये कर्म्मका अधिकार

अहं ममेतिवद्भेदो यथा नास्ति दिवौकसः !।
मन्मच्छक्त्योस्तथा कर्म्म-मच्छक्त्योर्नास्ति भिन्नता ॥
देवाः ! उद्भावकं सत्त्व-तमसोः कर्म्म कथ्यते ।
धर्म्मः सत्त्वप्रधानत्वादधर्म्मस्तद्विपर्य्ययात् ॥
गूढं रहस्यं धर्म्मस्याऽधर्म्मस्याप्येतदेव हि ।

प्रश्नः—

साधारणतो हि कति विधाः
कर्मभेदाः किंस्वरूपाश्चेति ?

समाधानम्—

जगज्जनन्या शक्तिगीतायां देवान् प्रति इत्थमभिहितम्—

सर्व्वोपरि हैं। हे देवगण! जैसे मुझमें और मेरी शक्तिमें 'अहं ममेतिवत्' भेद नहीं है, उसी प्रकार मेरी शक्ति और कर्म्ममें भेद नहीं है। हे देवगण! कर्म्म ही सत्त्व और तमका उद्भावक होनेसे सत्त्वप्रधानतासे धर्म्म और तमःप्रधानतासे अधर्म्म कहाता है। धर्म्म और अधर्म्मका यही गूढ़ रहस्य है।

प्रश्न—

कर्मके भेद साधारणतः किस प्रकारसे माने गये हैं और भेदोंका स्वरूप क्या है?

उत्तर—

जगज्जननीने शक्तिगीतामें देवोंसे इस प्रकार कहा है कि:—

जैवैशसहजाख्याभिस्त्रिधा कर्म्म विभिद्यते ॥
आश्रित्य सहजं कर्म्म भुवनानि चतुर्दश ।
जायन्ते च विराट् सृष्टिः जङ्गमस्थावरात्मिका ॥
देवासुराधिकारेण द्विविधेन समन्वितम् ।
सम्पुष्टं नैकवैचित्र्यैर्भूतसङ्घैश्चतुर्विधैः ॥
सहजाख्यश्च कर्म्मैव ब्रह्माण्डं सृजते सुराः ! ।
कर्म्मभू मर्त्यलोकं हि जैवं कर्म्म दिवौकसः ! ॥
विविधानधिकारांश्च मानवानां यथायथम् ।
स्वर्नरकादिकान् भोगलोकांश्च सृजते पुनः ॥
मन्निघ्नं सहजं कर्म्म जैवं जानीत जीवसात् ।
जीवाः सन्ति पराधीनाः सहजे कर्म्मणि स्वतः ॥

कर्म्म साधारणतः 'जैव ऐश और सहज' रूपसे तीन भेदोंमें विभक्त है। चतुर्दश भुवन और उनमें स्थावर-जंगमात्मक विराट् सृष्टिका प्रकट होना सहज कर्म्मके अधीन है। सहज कर्म्म ही चतुर्विध भूतसङ्घ और देवासुर-रूपी द्विविध अधिकारसहित अनन्त वैचित्र्यपूर्ण ब्रह्माण्डकी सृष्टि करता है। पुनः हे देवगण ! जैवकर्म्मके द्वारा ही कर्म्म-भूमि मनुष्यलोक, मनुष्योंके यथायोग्य विविध अधिकार और स्वर्गनरकादि भोगलोककी सृष्टि हुआ करती है। सहज कर्म्म मेरे अधीन और जैवकर्म्म जीवोंके अधीन हैं सो जानो। सहज कर्म्ममें जीव स्वतः पराधीन हैं और हे देवगण !

जैवे स्वाधीनतां यान्ति जीवाः कर्म्मणि निर्जराः!
सन्त्यतो मानवाः सर्व्वे पुण्यपापाधिकारिणः॥
आभ्यां विचित्रमेवेदमैशं कर्म्म किमप्यहो।
साहाय्यमुभयोरेव कर्म्मैतत् कुरुते किल॥
केवलं मम कर्म्मैतदवतारेषु जायते।
देवाः! ममावताराणां भेदान्नैकान्निबोधत॥
आध्यात्मिकाधिदैवाधिभूतशक्तियुतास्त्रयः।
शक्तिद्वयेन सञ्जुष्टो युक्तः शक्तित्रयेण च॥
एवं पञ्चविधा ज्ञेया अवतारास्तथैव च!
अंशावेशावतारौ हि तथा पूर्णावतारकः॥
एवं बहुविधास्सन्ति ह्यवतारा दिवौकसः!।
एते सर्व्वे प्राप्नुवन्ति निम्नतामैशकर्म्मणः॥

जैवकर्ममें जीव-स्वाधीन हैं, इस कारण सब मनुष्य पाप-पुण्यके भोगके अधिकारी होते हैं। इन दोनोंके अतिरिक्त ऐश कर्म्म कुछ विचित्र ही है। ऐश-कर्म्म उभय सहायक है और वह कर्म्म केवल मेरे अवतारोंमें ही प्रकट होता है। हे देवगण! मेरे अवतारोंके अनेक भेद जानो। मेरे अध्यात्मशक्तियुक्त, अधिदैवशक्तियुक्त, अधिभूतशक्तियुक, इनमेंसे दो शक्तियुक्त और इनमेंसे तीन शक्तियोंसे युक्त अवतार, इस प्रकारसे पांच प्रकारके अवतार जानने

दैवीं शक्तिं पराभूय प्रभवत्यासुरी यदा।
अप्यज्ञानं जगत्यत्र ज्ञानज्योतिर्विलुम्पति॥

असाधवो यदा साधून् क्लिश्नन्ति सहसा सुराः!।
धर्म्मग्लानिरधर्म्मस्य वृद्धया च जायते यदा॥

जायन्ते तु यदा मर्त्या मां विस्मृत्य निरन्तरम्।
विषयासक्तचेतस्का इन्द्रियासक्तिलोलुपाः॥

जीवानां शं तदा कर्तुमवतीर्णा भवाम्यहम्।
सुराः! समष्टिसंस्कारो हेतुरेवाऽत्र विद्यते॥

चाहियें और अंशावतार, आवेशावतार और पूर्णावतार, हे देवगण! इस प्रकारसे मेरे अवतारोंके अनेक भेद हैं। येसब देश-कर्म्मके अधीन हैं। जब जब दैवी शक्तिको परास्त करके आसुरी-शक्ति प्रबल होती है, जब संसारमें ज्ञानको आच्छन्न करके अज्ञान प्रबल हो जाता है, हे देवगण! जब असाधुगण साधुओंको सहसा क्लेश पहुँचाने लगते हैं, जब अधर्म बढ़नेसे धर्म्मकी ग्लानि होने लगती है और जब मनुष्यगण मुझको भूलकर विषयोन्मत्त और इन्द्रिय-परायण हो जाते हैं तब जीवोंके कल्याण करनेके लिये मैं अवतीर्ण होती हूँ हे देवगण! समष्टि संस्कार ही इसमें कारण है।

प्रश्नः—

कोऽसौ संस्कारः, तेन च कर्मणः कीदृशः सम्बन्धः, के च तद्भेदाः, वैदिकसंस्काराणाञ्च किं रहस्यमिति ?

समाधानम्—

एतस्योत्तरं तु ब्रह्ममयी शक्तिगीतायां देवेभ्यः स्वयमेवाभिधत्ते—

बीजञ्च कर्म्मणो ज्ञेयं संस्कारो नात्र संशयः।
मम प्रभावतो देवाः! व्यष्टिसृष्टिसमुद्भवे॥
चिज्जड़ग्रन्थिसम्बन्धाज्जीवभावः प्रकाशते।
स्थानं तदेव संस्कार-समुत्पत्तेर्विदुर्बुधाः॥

प्रश्न—

संस्कार किसको कहते हैं और संस्कारसे कर्मका क्या सम्बन्ध है और संस्कारके भेद किस प्रकारसे माने गये हैं तथा वैदिकसंस्कारोंका रहस्य क्या है ?

उत्तर—

देवताओंसे ब्रह्ममयी महामायाने शक्तिगीतामें कहा है कि:—

कर्मका बीज संस्कार जानो, इसमें सन्देह नहीं। हे देवगण! मेरे प्रभावसे व्यष्टिसृष्टि होते समय चित् और जड़की ग्रन्थि बँधनकर जीवभावका प्राकट्य होता है, वही संस्कार-उत्पत्तिका स्थान है, ऐसा विज्ञगण समझते हैं।

सृष्टः संस्कार एवास्ति कारणं मूलमुत्तमम्।
प्राकृतोऽप्राकृतश्चैव संस्कारो द्विविधो मतः॥
स्वाभाविको हि भो देवाः! प्राकृतः कथ्यते बुधैः।
अस्वाभाविकसंस्कारस्तथाऽप्राकृत उच्यते॥
स्वाभाविकोऽस्ति संस्कारस्तत्र मोक्षस्य कारणम्।
अस्वाभाविकसंस्कारा निदानं बन्धनस्य च॥
स्वाभाविको हि संस्कारस्त्रिधा शुद्धिं प्रयच्छति।
देवाः! षोड़शभिः सम्यक् कलाभिर्मे प्रकाश्यते॥
मुक्तिप्रदोऽद्वितीयोऽपि संस्कारः प्राकृतो ध्रुवम्।
साहाय्यात्षोड़शानां मे कलानां कर्म्मपारगाः॥
ऋषयः श्रौतसंस्कारैः शुद्धिं षोड़शसङ्ख्यकैः।
आर्य्यजातेर्विशुद्धाया ररक्षुर्यत्नतः खलु॥

संस्कार ही सृष्टिका 'प्रधान' मूलकारण है, संस्कार दो प्रकार-का होता है प्राकृत और अप्राकृत। हे देवगण! विज्ञलोग प्राकृतको स्वाभाविक और अप्राकृतको अस्वाभाविक कहते हैं। इनमें स्वाभाविक संस्कार मुक्तिका कारण और अस्वाभाविक संस्कार बन्धनका कारण होता है। स्वाभाविक संस्कार त्रिविध शुद्धि देते हैं। स्वाभाविक संस्कार अद्वितीय और मुक्तिप्रद होनेपर भी हे देवगण! वह मेरी षोडशकलाओंसे भलीभाँति निश्चय प्रकाशित होता है, मेरी षोडशकलाओंको

अस्वाभाविकसंस्कारा जीवान् बध्नन्ति निश्चितम् ।
अनन्तास्तस्य विज्ञेया भेदा बन्धनहेतवः ॥
स्वाभाविकी यदा भूमिः संस्कारस्य प्रकाशते ।
यच्छत्यभ्युदयं नृभ्यो दद्यान्मुक्तिमसौ क्रमात् ॥
एतावच्छ्रौतसंस्कार-रहस्यमवधार्य्यताम् ।
वेद्या भवद्भिरप्येषा श्रुतिर्देवाः ! सनातनी ॥
संस्कारेष्वहमेवास्मि वैदिकेष्वखिलेष्वहो ।
स्वसम्पूर्णकलारूपैस्तत्रॄन् स्वाभिमुखं नये ॥
गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तोन्नयनं तथा ।
जातकर्म तथा नाम-करणञ्चान्नप्राशनम् ॥

अवलम्बन करके कर्म्मके पारदर्शी ऋषियोंने वैदिक षोडश-संस्कारोंसे पवित्र आर्य्यजातिको यत्नपूर्वक शुद्ध रक्खा है। अस्वाभाविक संस्कार जीवोंको नियमित बांधा ही करते हैं, उनके बन्धनकारक भेद अनन्त हैं।–स्वाभाविक संस्कारकी भूमि जब प्रकट होती है तो वह क्रमशः मनुष्योंको अभ्युदय-प्रदान करती हुई अन्तमें मुक्ति देती है, हे देवतागण ! आप लोग यही वैदिकसंस्कारका रहस्य और सनातनी श्रुति समझें । सब वैदिक संस्कारोंमें मैं ही अपनी पूर्णकलारूपसे विद्यमान हूं; अतः अपनी ओर मनुष्योंको आकर्षित करती हूं । उक्त षोडश वैदिक संस्कारोंके हे देवतागण ! नाम ये हैं:—गर्भाधान, पुंसवन,

चूड़ोपनयने ब्रह्म-व्रतं वेदव्रतं तथा।
समावर्त्तनमुद्वाहोऽग्न्याधानं विबुधर्षभाः! ॥
दीक्षा महाव्रतश्चान्त्यः संन्यासः षोडशो मतः।
संस्कारा वैदिका ज्ञेया उक्तषोड़शनामकाः ॥
अन्ये च वैदिकाः स्मार्त्ताः पौराणास्तान्त्रिकाश्च ये
एषु षोड़शसंस्कारेष्वन्तर्भुक्ता भवन्ति ते ॥
प्रवृत्ते रोधकास्तत्र संस्कारा अष्ट चादिमाः।
अन्तिमा अष्ट विज्ञेया निवृत्तेः पोषकाश्च ते ॥
अतो विवेकसम्पन्नः सन्न्यासी विमलाशयः।
ज्ञानाब्धिपारगो देवाः! श्रद्धेयो भवतामपि ॥
पूर्णं प्रकाश्य सन्न्यासे संस्कारः प्राकृतो मम।
हेतुत्वं वहते मुक्तेर्मोनवानामसंशयम् ॥

सीमन्तोन्नयन, जातकर्म्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चौलकरण, उपनयन, ब्रह्मव्रत, देवव्रत, समावर्त्तन, उद्वाह, अग्न्याधान, दीक्षा, महाव्रत और अन्तिम अर्थात् सोलहवाँ सन्न्यास है। अन्यान्य वैदिक, स्मार्त्त, पौराणिक और तान्त्रिक संस्कार इन्हीं सोलह संस्कारोंके अन्तर्भुक्त हैं। उनमें प्रथम आठ संस्कार प्रवृत्तिरोधक हैं और अन्तिम आठ संस्कार निवृत्तिपोषक हैं। इसी कारण हे देवतागण! विवेक-सम्पन्न विमलाशय और ज्ञानसमुद्रका पारगामी सन्न्यासी आप लोगोंका भी श्रद्धास्पद है। मेरे स्वाभाविक

स्वाभाविकोऽस्ति संस्कारो मूले सहजकर्मणः ।
मूले तथाऽस्ति जैवस्य संस्कारोऽप्राकृतो मम ॥
संस्कारो द्विविधश्चास्ते मूल ऐशस्य कर्म्मणः ।
जानीतैतद्रहस्यं भोः श्रौतसंस्कारगोचरम् ॥ ५२ ॥
निखिला एव संस्काराः साद्यन्ताः सम्प्रकीर्त्तिताः ।
अतो जीवप्रवाहेऽस्मिन्ननाद्यन्तेऽपि जन्तवः ॥
मुक्तिशीलास्तथोत्पत्ति-शालिनः सन्ति सर्व्वथा ।
नैवात्र विस्मयः कार्य्यो भवद्भिरमृतान्धसः ! ॥
शुद्धिः संस्कारजन्यैव मुक्तेरास्ते सहायिका ।
यतः संस्कारसंशुद्धेः कर्म्मशुद्धिः प्रजायते ॥
कर्म्मशुद्धेस्ततो मुक्तिर्जायते विमलात्मनाम् ।
अतः संस्कारजां शुद्धिं जगुः कैवल्यकारणाम् ॥

संस्कारका पूर्ण विकाश सन्न्यास आश्रममें होकर मनुष्योंकी मुक्तिका कारण अवश्य बन जाता है। सहज कर्मके मूलमें स्वाभाविक संस्कार, जैव-कर्मके मूलमें अस्वाभाविक संस्कार और ऐश-कर्म्मके मूलमें उभय संस्कार विद्यमान हैं यही श्रौत संस्कारोंका रहस्य जानो। सब संस्कार ही सादि सान्त हैं, इस कारण जीवप्रवाह अनादि अनन्त होने पर भी जीव सर्व्वथा उत्पत्ति और मुक्तिशील है, हे देवगण! इसमें आप विस्मय न करें। संस्कारजन्य शुद्धि ही मुक्तिकी सहायक है; क्योंकि संस्कारशुद्धिसे कर्म्मकी शुद्धि

बीजमुत्पद्यते वृक्षाद्वृक्षो बीजात्पुनः पुनः।
एवमुत्पद्यमानौ तौ बीजवृक्षौ निरन्तरम्॥

सृष्टिक्रमानन्तभावमुभौ द्योतयतो यथा।
एव सृष्टिप्रवाहोऽयमनाद्यन्तोऽस्ति निर्ज्जराः!॥

यथा तु भर्ज्जितं बीजं नाङ्कुराय प्रकल्पते।
तथैव कामनानाशात् खलु भर्ज्जितबीजवत्॥

संस्कारा अपि जायन्ते सर्व्वथा मुक्तिहेतवः।
नात्र कश्चन सन्देहो विद्यतेऽदितिनन्दनाः!॥

गुणत्रयात्मिका देवाः! विद्यते प्रकृतिर्मम।
तस्याः स्पन्दादभूत्कर्म सहजातमतोऽस्ति तत्॥

और कर्मशुद्धिसे निर्मल चित्तवालोंकी मुक्ति होती है, इस-लिये संस्कार-शुद्धिको कैवल्यका कारण कहते हैं। जिस प्रकार बीजसे वृक्ष और वृक्षसे पुनः पुनः बीज होते हुए बीज और वृक्ष सृष्टिक्रमकी अनन्तता निरन्तर प्रकाशित करते हैं, हे देवगण! वैसेही सृष्टिप्रवाह अनादि अनन्त है। परन्तु भर्जित बीज जिस प्रकार अङ्कुरोत्पत्ति करनेमें असमर्थ है, उसी प्रकार कामनाके नाश हो जानेसे संस्कारसमूह भी भर्जित बीजके सदृश होकर ही सर्व्वथा मुक्तिके कारण बन जाते हैं, हे देवगण! इसमें कुछ सन्देह नहीं है। मेरी प्रकृति त्रिगुणमयी होनेके कारण और कर्म्म प्रकृतिस्पन्दनसे

संस्कारो बीजतुल्योऽस्ति कर्म्मांत्राङ्कुरसन्निभम्।
अतो नष्टे हि संस्कारे कर्मणः सम्भवः कुतः॥
अन्यत्वात्प्रकृतेः साक्षात्सहजं कर्म कोविदाः।
उत्पत्तेरपि मोक्षस्य जीवानां कारणं विदुः॥
प्रातिकूल्येन जैवन्तु जीवानां कर्मबन्धनम्।
यावज्जैवं न वै कर्म संस्कारैर्वैदिकैः शुभैः॥
पूर्णं शुद्धं सदाप्नोति दशां स्वाभाविकीं हिताम्।
तावन्नूनं भवेत्पूर्णं जीवकैवल्यबाधकम्॥
धर्मस्य धारिका शक्तिस्तस्य चाभ्युदयप्रदः।
क्रमः कैवल्यदश्चैव सहजे प्राकृते शुभे॥

उत्पन्न होनेके कारण उसका सहजात है। संस्कार कर्मबीज और अङ्कुर सदृश हैं, इसलिये संस्कार नष्ट होने-पर कर्मका होना कैसे सम्भव है। सहज कर्म प्रकृतिसे साक्षात् उत्पन्न होनेके कारण जीवोत्पत्तिका भी कारण है और जीवमुक्तिविधायक भी है, इस बातको पण्डितलोग जानते हैं। परन्तु जैवकर्म इससे विपरीत होनेके कारण बन्धनका कारण है और जब तक वह शुभ वैदिक संस्कारोंसे परिशुद्ध होकर हितकारिणी स्वाभाविक दशाको नहीं प्राप्त होता, तब तक जीवकी मुक्तिका निश्चयही पूर्ण बाधक रहता है। धर्मकी धारिका शक्ति और धर्मका अभ्युदय

नित्यं जागर्ति संस्कारे प्राणिनां हितसाधके।
विश्वकल्याणदे नित्ये सर्वश्रेष्ठे मनोरमे॥

संस्कारेष्वहमेवास्मि सर्वपूक्तेषु सन्ततम्।
संस्थिता धर्मरूपेण निश्चितं विबुधर्षभाः!॥

नारीजातौ तपोमूलः सतीधर्मः सनातनः।
स्वयमेव हि संस्कारशुद्धिं जनयते ध्रुवम्॥

वर्णाश्रमाख्यधर्म्मस्य मर्य्यादा नितरां तथा।
नृजातावपि संस्कार-शुद्धिं जनयतेतराम्॥

नार्य्यर्थे पुरुषार्थश्च धर्म्मावुक्तावुभावपि।
स्वाभाविकावतस्तौ तौ सदाचारावनादिकौ॥

एतद्द्वयसदाचारालम्बनादेव निर्ज्जराः!।
लभन्ते च नरा नार्य्यः कैवल्याभ्युदयौ क्रमात्॥

और निःश्रेयस प्रदानका क्रम प्राणियोंके हितसाधक, संसारके कल्याणकारक, नित्य, शुभ, सर्वश्रेष्ठ और मनोरम सहजात स्वाभाविक संस्कारमें नित्य बना रहता है। हे देवगण! उक्त षोडश संस्कारोंमें मैं ही धर्म्मरूपसे सदा ही विद्यमान हूँ। नारीजातिके लिये तपोमूलक सनातन सती-धर्म्म संस्कारशुद्धि अपने आप ही उत्पन्न करता है, यह निश्चय है। उसी प्रकार पुरुषजातिमें भी वर्णाश्रम-धर्म्ममर्य्यादा संस्कार-शुद्धिको निरन्तर उत्पन्न करती है। स्त्री और पुरुषके लिये ये दोनों धर्म्म स्वाभाविक हैं अतः ये दोनों सदाचार अनादि हैं। हे देवगण!

उभावेतौ सदाचारौ शुद्धित्रैविध्यकारकौ ।
संस्कारस्य च सर्वस्य प्राकृतस्य प्रकाशकौ ॥
वर्द्धकौ सत्त्वस्य कैवल्याभ्युदयप्रदौ ।
सतीधर्म्माश्रयान्नारी पत्यौ तन्मयतां गता ॥
नारीयोनेः सती मुक्ता भुक्त्वा स्वर्गसुखं चिरम्
उन्नतां पुरुषस्यैव योनिं प्राप्नोत्यसंशयम् ॥
सम्यग्वर्णाश्रमाख्यस्य श्रौतधर्म्मस्य सेवया ।
विश्वेषां गुरवो मान्या निखिला आर्य्यपूरुषाः ॥
आद्येनानर्गलां स्वीयां प्रवृत्तिमवरुध्य ते ।
परिपोष्य निवृत्तिञ्च परेणात्मप्रकाशिकाम् ॥

इन दोनों सदाचारोंके अवलम्बनसे ही यथाक्रम नारीजाति और पुरुषजाति अभ्युदय और निःश्रेयसको प्राप्त करती है । ये दोनों सदाचार त्रिविध-शुद्धि-विधायक हैं, सकल स्वाभाविक संस्कारोंके प्रकाशक हैं । सत्त्वगुणवर्द्धक हैं और अभ्युदय और निःश्रेयसप्रद हैं । सतीधर्मके आश्रयसे स्त्री पतिमें तन्मयता लाभ करके बहुकालतक स्वर्गसुख भोगती हुई नारीयोनिसे मुक्त होकर उन्नत पुरुषयोनिको ही निश्चय प्राप्त हो जाती है । वेदविहित वर्णाश्रमधर्मकी सुन्दर-रूपसे सेवा करनेसे जगद्गुरु और मान्य समस्त आर्य्यपुरुष-गण प्रथमके द्वारा अपनी अनर्गल प्रवृत्तिको रोक कर और

अपवर्गास्पदं नित्यं परमं मङ्गलं चिरम् ।
प्राप्नुवन्ति सुपर्वाणः ! स्यादेषोपनिषत्परा ॥

प्रश्नः—

त्रिविधकर्मणां किं वैज्ञानिकं स्वरूपम् ?

समाधानम्—

सैव महामाया शक्तिगीतायां स्वयम् उवाच—

स्वभावात्प्रकृतिर्मे हि स्पन्दते परिणामिनी ।
स एव स्पन्दहिल्लोलः स्वभावोत्पादितो मुहुः ॥
सदैवास्ते भवन् देवाः ! स्वरूपे प्रतिबिम्बितः ।
तस्मान्मम प्राकृतानां गुणानां परिणामतः ॥

इनरेके द्वारा आत्मप्रकाशिका निवृत्तिको बढ़ाकर परमङ्गलमय और नित्य कैवल्यपदको निरन्तर प्राप्त कर लेते हैं, हे देवगण ! यही श्रेष्ठ उपनिषद् है ।

प्रश्न—

त्रिविध कर्मका वैज्ञानिक स्वरूप क्या है ?

उत्तर—

जगज्जननी ब्रह्ममयी महामायाने शक्तिगीतामें निज मुखसे कहा है :—

मेरी प्रकृति स्वभावसेही परिणामिनी होकर स्पन्दित होती है । हे देवगण ! वही स्वभावजनित स्पन्दनका हिल्लोल सदा ही स्वरूपमें बारम्बार प्रतिफलित होने लगता है, अतः मेरी प्रकृ-

अविद्याऽऽविर्भवेन्नूनं तरङ्गैस्तामसोन्मुखैः।
सत्त्वोन्मुखैश्च तैर्देवाः! विद्याऽऽविर्भावमेति च॥
तदाऽविद्याप्रभावेण तरङ्गाणां मुहुर्मुहुः।
आघातप्रतिघाताभ्यां जलैः पूर्णे जलाशये॥
अगण्यवीचिसङ्घेषु नैकचैन्द्रविम्बवत्।
चिज्जडग्रन्थिभिर्देवाः! स्वत उत्पद्य भूरिशः॥
जीवप्रवाहपुञ्जोऽयमनाद्यन्तो वितन्यते।
तदैवोत्पद्य संस्कारो नूनं स्वाभाविको मम॥
कर्म्मणा सहजेनैव विश्वविस्तारकारिणा।
आविर्भावयते सृष्टिं जङ्गमस्थावरात्मिकाम्॥

तिके गुणपरिणामके कारण तमकी ओरके तरङ्गसे अविद्या और सत्त्वकी ओरके तरङ्गसे विद्या प्रकट अवश्य होती है। उस समय अविद्याके प्रभावसे वारम्वार तरङ्गोंके घात प्रतिघात द्वारा, जलपूर्ण जलाशयके अगणित तरङ्गोंमें अनेक चन्द्रविम्बके प्रकाशके समान, हे देवगण! स्वतः ही अनेक चिज्जडग्रन्थि उत्पन्न होकर अनादि अनन्त जीवप्रवाहको विस्तार करती है। उसी समय मेरा स्वाभाविक संस्कार अवश्य उत्पन्न होकर संसारविस्तारकारी सहजकर्म्मसे ही स्थावर जंगमात्मक सृष्टि प्रकट करता है, परन्तु जीवत्वकी पूर्णता मनुष्य शरीरमें प्राप्त होनेपर जैवकर्म्म उत्पन्न

किन्तु मानवदेहेषु पूर्णे जीवत्व आगते।
जैवमुत्पद्यते कर्म्म तत्र तत्क्षणमेव तु ॥
अस्वाभाविकसंस्कार-प्रवाहो वहते ध्रुवम्।
जैवकर्मप्रभावात्स वैश्ववैचित्र्यसङ्कुलम् ॥
त्रितापप्रचुरं स्वेदावागमनचक्रकम्।
जैवकर्मप्रभावाच्च तस्मादेव भवन्त्यमी ॥
नरकप्रेतपित्रादिभोगलोकाः स्वरन्विताः।
मृत्युलोकात्मकः कर्म्म-लोकश्च विबुधर्षभाः ! ॥
उत्पद्यन्ते तथेमानि भुवनानि चतुर्दश।
विद्याऽऽःते मामकीना या पूर्णसत्त्वगुणान्विता ॥
एतस्याः कारणत्वेन शक्तिरैशस्य कर्म्मणः।
विचित्रास्ति तयोस्ताभ्यां कर्म्मभ्याञ्च सहायिका ॥

होता है और वहां उसी समय अस्वाभाविक संस्कारका प्रवाह प्रवाहित अवश्य होता है और वह जैव कर्म्मके बलसे ब्रह्माण्डके वैचित्र्यसे युक्त और त्रितापमय आवागमनचक्रको स्थायी रखता है। उसी जैवकर्मके प्रभावसे स्वर्गलोक सहित नरकलोक, प्रेतलोक, पितृलोकादि भोगलोक और मृत्युलोकरूपी कर्मलोक तथा हे देवगण! चतुर्दश भुवन उत्पन्न होते हैं। पूर्ण सत्त्वगुणमयी मेरी विद्याके कारण ऐश कर्मकी शक्ति इन दोनों कर्मोंकी सहायक होनेपर भी उनसे विचित्र है।

विद्यायां सत्त्वपूर्णायामविद्यायाः कथञ्चन ।
नैवास्ते लेशमात्रं हि विद्यासेवित ईश्वरः ॥
सर्व्वतोऽतस्तटस्थोऽपि सर्व्वेषामन्तरात्मदृक् ।
यथायथं पालयते सृष्टिस्थितिलयक्रमम् ॥
अतोऽहमेव सम्प्रोच्ये जगत्यां जगदीश्वरी ।
महामान्या जगद्धात्री सर्वकल्याणकारिणी ॥
देवाः ! प्रकृतिजन्यत्वादस्ति कर्म्म जड़ात्मकम् ।
अतः कर्म्मत्रयेऽपि स्यात्पूर्णा वस्सुसहायता ॥
सञ्चालने भवन्तो हि कर्म्मणः सहजस्य मे ।
पूर्णं सहायकाः सन्ति तन्मे प्रकृतिसाद्यतः ॥

विद्यावस्थामें सत्त्वगुणकी पूर्णता होनेसे किसी प्रकारसे भी अज्ञानका लेशमात्र नहीं रहता, इस कारण विद्यासेवित ईश्वर सबसे अलग रहकर भी सबके अन्तर्द्रष्टा होकर सृष्टि स्थितिलयका क्रम यथावत् पालन कराते हैं। इसी कारण मैं ही जगत्‌में जगदीश्वरी विश्वकल्याणकारिणी जगद्धात्री महामान्या कहलाती हूँ। हे देवतागण ! कर्म प्रकृतिसञ्जात होनेके कारण जड़ है, इस कारण तीनों कर्मोंमें आपलोगों-की पूरी सहायता विद्यमान है। सहजकर्मके सञ्चालनमें आपलोग पूर्ण सहायक हो, क्योंकि सहजकर्म मेरी प्रकृतिके अधीन है। हे देवतागण ! जैवकर्म जीवप्रकृतिके अधीन

जैवं कर्म्मास्ति जीवानामायत्तं प्रकृतेर्यतः ।
अतस्तत्रार्द्धसम्बन्धो वर्त्तते भवतां सुरा ! ॥
भवन्तो मानवानां हि सन्ति प्रारब्धचालकाः ।
पुरुषार्थस्य कर्त्तारः स्वयं जीवा न संशयः ॥
किन्त्वैशकर्म्मणो देवाः ! आज्ञां लब्ध्वाऽथ मामकीम् ।
अवतीर्य्य भवन्तो वै सम्पद्यन्ते सहायकाः ॥
ममावतारसाहाय्ये प्रवर्त्तन्तेऽथवा द्रुतम् ।
अत्यन्तमस्ति दुर्ज्ञेया गहना कर्म्मणो गतिः ॥
राजते कर्म्मराज्यञ्च नानावैचित्र्यसङ्कुलम् ।
अनन्तपिण्डब्रह्माण्ड-कर्तृ कर्म्मैव विद्यते ॥
यो मे कर्म्मगतिं वेत्ति स मत्सान्निध्यमाप्नुयात् ।
न स्वल्पोऽप्यत्र सन्देहो विधेयो विस्मयोऽथवा ॥

होनेके कारण उसमें आपका आधा सम्बन्ध है क्योंकि मनुष्यों-में प्रारब्धके सञ्चालक आपलोग और पुरुषार्थकर्त्ता जीव स्वयं हैं; परन्तु हे देवतागण ! मेरी आज्ञाको पाकर अवतार ग्रहण करके तुमलोग ऐश कर्मके सहायक बनते हो। अथवा मेरे अवतारोंकी सहायतामें शीघ्र प्रवृत्त होते हो। कर्मकी गहन गति अतिदुर्ज्ञेय है । कर्मराज्य नाना-वैचित्र्यसे पूर्ण है और कर्म ही अनन्त पिण्ड और अनन्त ब्रह्माण्डोंका कर्त्ता है। जो मेरे कर्मोंकी गतिको जानता है, वह मेरे सान्निध्यको लाभ करता है, इसमें सन्देह और विस्मय

दत्ताः कर्म्मगतिं ज्ञातुं भक्ता ज्ञानिन एव मे।
ज्ञातुं कर्म्मगतिं जीवा अन्यथेच्छन्त आत्मना॥
विद्याभिमानिनो मूढ़ा मम भक्तेः पराङ्मुखाः।
विमार्गगाः पतन्त्याशु रात्र्यन्धा इव गह्वरे॥

प्रश्नः—

किञ्च जैवकर्म-गति-रहस्यम् ?

समाधानम्—

ब्रह्ममय्या भवतां प्रश्नस्योत्तरमेवमभिधीयते—
जैवस्य कर्म्मणो देवा ! द्वे गती स्तः प्रधानतः।
जीवानेका गतिर्जैवी ह्यधस्तान्नयते तयोः॥

कुछ भी नहीं करना चाहिये। मेरे ज्ञानी भक्त ही कर्म-गतिवेत्ता हो सकते हैं। अन्यथा कर्मकी गति जाननेकी स्वयं इच्छा करनेवाले मेरी भक्तिसे विमुख विद्याभिमानी मूख जीव मूर्ख रात्र्यन्धके समान विपथगामी होकर गड्ढेमें शीघ्र गिर जाते हैं।

प्रश्न—

जैव कर्म्मकी गतियोंका रहस्य क्या है ?

उत्तर—

जगज्जननी ब्रह्ममयी महामायाने शक्तिगीतामें निज मुखसे कहा है कि:—

हे देवगण ! जैवकर्मकी प्रधान दो गतियाँ हैं। उनमें से एक गति जीवोंको अधःपतित करती है और उनको जड़त्वकी

प्रापयेत जड़त्वं च देवाः! साऽस्ते तमोमयी।
यतश्चाधर्म्मसम्भूता वर्त्ततेऽसौ दिवौकसः! ॥
ऊर्द्ध्वं प्रापयते जीवान् द्रुतं जैव्यपरा गतिः।
स्वरूपं चेतनञ्चासावभिलक्ष्य प्रवर्त्तयेत् ॥
धर्म्मस्य धारिकाशक्ति–युता सत्त्वमयी हि सा।
इयं हि कर्म्मणो देवा! गतिः सेव्योर्द्ध्वगामिनी ॥
देवाः! ऊर्द्ध्वगतेर्जैवकर्म्मणोऽस्याः कदाचन।
विच्योतेरन् कथञ्चिन्न भवन्तो भोगलोलुपाः ॥
मार्गमालम्ब्य मे नूनमेनमेवोर्द्ध्वगामिनम्।
मामनायासमेवाशु भवन्तो लब्धुमीशते ॥

ओर ले जाती है, वह तमोमयी गति है, क्योंकि वह अधर्म्म-सम्भूत है। उसकी दूसरी गति जीवोंको शीघ्र ऊर्द्ध्व करती है और उनको स्वस्वरूप चेतनकी ओर प्रवृत्त करती है, वह गति सत्त्वमयी है, क्योंकि वह धर्मकी धारिका शक्तिसे युक्त है। हे देवगण! कर्मकी यही ऊर्द्ध्वगामिनी गति सेवनीय है। हे देवतागण! आपलोग कदापि भोगलालसाके वशीभूत होकर जैव कर्मकी इस ऊर्द्ध्व-गामिनी गतिसे किसी प्रकार च्युत न होना। इसी ऊर्द्ध्वगामी मेरे मार्गको अवलम्बन करके आप मुझको अनायास शीघ्रही प्राप्त हो सकोगे। हे देवतागण! मेरी बात सुनो, कर्मके साथ दो शक्तियोंका सर्व्वथा सम्बन्ध है,

श्रूयतां मद्वचो देवाः ! कर्म्मणा सह सर्वथा ।
सम्बध्येतेऽथ शक्ती द्वे आकर्षणविकर्षणे ॥
दिवौकसः ! रागमूला शक्तिराकर्षणाभिधा ।
भवद्भिरवगन्तव्या समुत्पन्ना रजोगुणात् ॥
विकर्षणाख्या या शक्तिरपरा द्वेषमूलिका ।
अवधार्य्या भवद्भिः सा समुद्भूता तमोगुणात् ॥
आभ्यां द्वाभ्यां हि शक्तिभ्यां ब्रह्माण्डं निखिलं तथा ।
पिण्डं समस्तमाच्छन्नं सत्यमेतद्वदामि वः ॥
एतच्छक्तिद्वयं ह्यास्ते मयि नैवास्म्यहं तयोः ।
बलाच्छक्तिद्वयस्यास्य कर्म्मजातमथाखिलम् ॥
सम्विभक्तं द्विधा देवाः ! उत्तरोत्तरवर्द्धकम् ।
सृष्टेर्द्वन्द्वात्मिकाया मे प्रवाहं वाहयत्यहो ॥

एक आकर्षणशक्ति और दूसरी विकर्षणशक्ति। आकर्षणशक्ति रागमूलक होनेसे रजोगुणसे उत्पन्न है, हे देवगण ! इसको आप समझें। दूसरी विकर्षणशक्ति द्वेषमूलक होनेके कारण तमोगुणसे उत्पन्न है ऐसा आप समझें। इन्हीं दोनों शक्तियोंसे समस्त ब्रह्माण्ड और समस्त पिण्ड आच्छन्न है, इसको आपलोगोंसे मैं सत्य कहता हूं। ये दोनों ही शक्तियां मुझमें हैं, परन्तु मैं इन दोनोंमें नहीं हूं। इन दोनों शक्तियोंके प्रभावसे सब कर्मसमूह द्विधा विभक्त होकर मेरी द्वन्द्वात्मक सृष्टिका प्रवाह उत्तरोत्तर प्रवाहित

समता च द्वयोर्यत्र शक्त्योः संजायते शुभा।
तत्रैव सत्त्वसंश्लिष्ट-ज्ञानानन्दस्थितिर्भवेत् ॥
अहं तस्यामवस्थायां सत्त्वमय्यां सदा सुराः!
नन्वाविर्भावमापन्ना सन्तिष्ठे नात्र संशयः ॥
काऽप्यवस्था बन्धहेतुः शक्तिद्वयसमन्विता।
जीवानां सर्वथा देवाः! जीवत्वस्यैव पोषिका ॥
सत्त्वावस्था तृतीया या सैव मुक्तिप्रदायिका।
एतच्छ्रौतरहस्य हि ज्ञायतां विबुधर्षभाः! ॥

प्रश्न—

किं स्वरूपः, कर्म्मयोगः तत्सम्बन्धेन कथं वा निःश्रेयसाधिगमः?

करते रहते हैं। इन दोनों शक्तियोंकी जहां सुन्दर समता होती है, वहीं सत्त्वगुणमय ज्ञान और आनन्दका स्थान है। इसी सत्त्वगुणमय अवस्थामें मैं सदा प्रकट रहती हूँ, हे देवगण! इसमें सन्देह नहीं है। इन दोनों शक्तियोंसे युक्त बन्धन करनेवाली यह अवस्था सर्व्वथा जीवोंके जीवत्वकीही पोषिका है। तीसरी सत्त्वगुणकी जो अवस्था है वही मुक्तिविधायिका है, हे देवगण! यही वेदोंका रहस्य है सो आप जानें।

प्रश्न—

कर्मयोगका स्वरूप क्या है और कर्म्मसम्बन्धसे मुक्तिपद कैसे प्राप्त हो सकता है?

समाधानम्—

शृण्वन्तु सावधानाः, एतदुत्तरितं जगज्जनन्या शक्तिगीतायाम्—

द्वन्द्वात्मिकाऽस्ति या शक्तिस्तन्मूलं विबुधाः! अतः।
मुच्यतां सर्वदा कर्म्म रागद्वेषादिसङ्कुलम्॥
रागद्वेषादिभिर्मुक्ता द्वन्द्वातीतपदं गता.।
निष्कामाः सत्त्वसम्पन्ना यूयं कर्त्तव्यकर्म्मणि॥
कर्म्मयोगरताः सन्तस्तत्परा भवतामराः!।
सर्व्वोत्तमफलं लब्ध्वा सानन्दा भवताप्यहो॥
भो देवाः! कर्म्मयोगेऽस्मिन् प्रत्यवायो न विद्यते।
कर्म्माप्येतत्कृतं स्वल्पं त्रितापं हरते क्षणात्॥

उत्तर—

जगज्जननी ब्रह्ममयी महामायाने शक्तिगीतामें निज मुखसे कहा है कि:—

हे देवतागण! इस कारण आपलोग द्वन्द्वात्मक-शक्तिमूलक और रागद्वेषादिसंकुल कर्मका सर्वदा त्याग करें। हे देवगण! रागद्वेषसे विमुक्त होकर द्वन्द्वातीत पदवीको लाभ करते हुए निष्काम होकर और सत्त्वगुणसे युक्त होकर कर्मयोगी होते हुए कर्तव्यकर्मपरायण होवें और सर्वोत्तम फल पाकर आनन्दित होवें। हे देवगण! इस कर्मयोगमें प्रत्यवाय नहीं है और यह कर्म थोड़ासा किया हुआ

कर्म्मयोगोऽनमेवाशु कामनाविलयेन हि।
समुत्पादयते देवाः! शुद्धिं संस्कारगोचराम् ॥
संस्कारशुद्धितो नूनं क्रियाशुद्धिः प्रजायते।
अविद्यायाः क्रियाशुद्ध्या लयः सम्पद्यते ध्रुवम् ॥
अविद्याविलयाद्विद्या साहाय्यान्नश्यति स्वयम्।
चिज्जडग्रन्थिरज्ञानमूलिका नात्र संशयः।
चिज्जडग्रन्थिसंनाशाज्जीवो वै जायते शिवः।
नैवात्र विस्मयः कार्य्यो भवद्भिरमृतान्धसः! ॥
ब्रह्माण्डपिण्डरूपस्य ह्यनाद्यन्तस्य कोविदाः।
देवाः! सृष्टिप्रवाहस्य कर्म्मैवोत्पादकं जनुः ॥

भी शीघ्र त्रितापको दूर करता है। हे देवगण! यही कर्म्मयोग कामनाके विलयद्वारा संस्कारशुद्धि शीघ्र उत्पन्न करता है। संस्कारशुद्धिसे ही क्रियाशुद्धि होती है और क्रियाशुद्धिसे अविद्याका विलय अवश्य होता है और उससे विद्याकी सहायताके द्वारा अज्ञानमूलक चिज्जडग्रन्थिका नाश स्वयं हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं। और चिज्जडग्रन्थिके नाश होनेसे ही जीव शिव होजाता है। हे देवगण! आपलोग इसमें विस्मय न करो। हे देवगण! कर्म्मही ब्रह्माण्ड और पिण्डात्मक अनादि अनन्त सृष्टि-

कर्म्मप्रवाहोऽनाद्यन्तस्ततस्तद्भोगलिप्सया।
सक्तानां तत्र जीवानां कर्म्मनाशः सुदुष्करः॥
अथवा मोचनं नूनं दुर्लभं कर्म्मबन्धनात्।
वर्त्तते विबुधश्रेष्ठाः! किमन्यद्वो ब्रवीम्यहम्॥
तत्कर्म्मबीजसंस्कारमुन्मूलयितुमात्मना।
निष्कामनाव्रतैः सद्भिर्भवद्भिर्यत्यतां सुराः!॥
तस्याहं सुगमोपायं वर्णये वः पुरोऽधुना।
समाहितैर्भवद्भिश्च श्रूयतां मे हितं वचः॥
मत्परायणतां पुण्यां गृह्णीताश्रयणं मम।
मद्भक्ताः सततं कर्म मद्युक्ताः कुरुतामराः!॥

प्रवाहका उत्पादक है, सुधीगण ऐसा कहते हैं। कर्म्म प्रवाह अनादि अनन्त है, इस कारण कर्म्मके भोगकी इच्छासे कर्म्ममें आसक्त होकर कर्म्मका नाश करना अथवा कर्म्मके फन्देसे मुक्त होना जीवोंके लिये असम्भव है. हे देवश्रेष्ठगण! आप लोगोंसे और मैं क्या कहूं। इस कारण हे देवगण! आपलोग निष्काम व्रत होकर कर्म्मबीजरूपी संस्कार-के नाश करनेमें स्वयं प्रयत्न करो। इसका सुगम उपाय मैं आपलोगोंके सामने इस समय वर्णन करती हूं, आपलोग भी सावधान होकर मेरी हितकी बात सुनें। हे देवगण! आप मेरी पवित्र परायणताको ग्रहण करो, मेरा आश्रय ग्रहण करो, मुझमेंही भक्तिमान् हो और मुझमें युक्त होकर निरन्तर

मदयुक्तैः कृतं कर्म्म बन्धनाय प्रकल्पते ।
मद्युक्तैर्विहितं तत्तु दत्ते कैवल्यमुत्तमम् ॥
संसारोऽतिविचित्रोऽयं जीवबन्धनकारकः ।
विकर्षणाकर्षणोत्थ-द्वन्द्वादेव प्रजायते ॥
संतिष्ठते च जीवानां द्वन्द्वः स्यात् बन्धकारणम्
परन्त्वत्स्वैकतत्त्वं हि मुक्तेः कारणमुत्तमम् ॥
तदाश्रयेण मद्भक्ता द्वन्द्वातीता विमत्सराः ।
युक्तकर्मरताः सन्तो निष्पापा मत्परायणाः ॥
यदा भवन्ति भो देवाः ! निष्कामव्रतधारिणः ।
तदैव मोक्षसम्प्राप्तेर्जायन्ते तेऽधिकारिणः ॥

कर्म्म करो। मुझमें अयुक्त होकर किया हुआ कर्म्म बन्धन-दशाको उत्पन्न करता है और मुझमें युक्त होकर किया हुआ कर्म्म उत्तम कैवल्यप्रद है। हे देवतागण! आकर्षण-विकर्षणजनित द्वन्द्वसे ही बन्धन करने वाला यह अति विचित्र संसार उत्पन्न होता है और स्थित रहता है, क्योंकि द्वन्द्व ही जीवोंके बन्धनका कारण है, परन्तु एकतत्त्व ही मुक्तिका उत्तम कारण है, उसके आश्रयसे द्वन्द्वातीत और विमत्सर होकर जब मेरे भक्त युक्त कर्म्ममें रत होकर निष्पाप मत्परायण और निष्काम-व्रतधारी होजाते हैं, तभी वे कैवल्य पद प्राप्तिके अधिकारी होते हैं। रक्तबीजरूपी दैवकर्म्म

यदा संस्कारबीजं स्यान्निष्कामानलभर्जितम् ।
जैवं कर्म तदा रक्तबीजरूपं प्रणश्यति ॥
एवं सति स्वयं जीवा जैवीं प्रकृतिमात्मनः ।
त्यक्त्वा मत्प्रकृतिं नूनमाश्रयन्ते शिवप्रदाम् ॥
तदा मत्प्रकृतिर्विद्यारूपं धृत्वा मनोहरम् ।
साधकेभ्यो ध्रुवं तेभ्यो दत्ते कैवल्यमुत्तमम् ॥
कर्मप्रतिक्रिया देवाः ! अदम्यास्ति न संशयः ।
तत्फलोत्पादिका शक्तिरफला नो कदाचन ॥
अतो मुक्तेऽपि जीवेऽस्मिन् तत्कृताः कर्म्मराशयः ।
निर्बीजा निष्फला नैव जायन्ते विबुधर्षभाः ! ॥

तभी नाशको प्राप्त होते हैं जब संस्कारबीज निष्कामरूपी अग्निसे भर्जित कर दिये जायँ। ऐसा होनेपर जीव स्वतः अपनी जैव प्रकृतिको छोड़ कर मेरी परममङ्गलकर प्रकृतिका ही आश्रय ग्रहण करते हैं। मेरी प्रकृति तब मनोहर विद्यारूप धारण करके उन्हीं साधकोंको उत्तम मुक्ति प्रदान करती है। हे देवतागण ! कर्म्मकी प्रतिक्रिया निस्सन्देह अदमनीय है और कर्मकी फलोत्पादिका शक्ति कभी भी अफला नहीं होती। इस कारण हे देवगण ! जीवः मुक्त हो जानेपर भी उसके किये हुए कर्म्मसमूह निर्वीज और निष्फल नहीं होते हैं। मुक्तजीवोंके कर्म्मोंकी संस्कार-

निर्ज्जरा: ! मुक्तजीवानां कर्म्मसंस्काराशय: ।
ब्रह्माण्डस्य चिदाकाशमाश्रयन्तो निरन्तरम् ॥
जायन्ते पोषिका: सम्यक्कर्म्मणो: सहजैशयो: ।
सत्यमेतद्विजानीत निश्चितं वो ब्रवीम्यहम् ॥
कर्म्म प्रायेण दुर्ज्जेयं वर्त्तते नात्र संशय: ।
सन्त्येव निखिला जीवा: कर्म्मौघवशवर्त्तिन: ॥
यूयं भवन्तो भो देवा: ! विश्वेषां शासका अपि ।
महान्तोऽपि सुयुक्ता: स्थ सुदृढै: कर्म्मबंधनै: ॥
वाच्यं किमत्र गीर्वाणा: ! अवतीर्णा स्वतोऽप्यहम् ।
बद्धा कर्म्मसु वर्त्तेऽहं नात्र कार्य्या विचारणा ॥
जीवन्मुक्ता महात्मानो मद्भक्ता ज्ञानिनोऽमरा: ! ।
प्राप्ता जीवद्दशायां ये मत्सायुज्यमसंशयम् ॥

राशि ब्रह्माण्डके चिदाकाशको आश्रय करके निरन्तर सहजकर्म और ऐश्वर्यकी पोषक भली भांति बन जाती है, हे देवतागण ! इसको सत्य जानें, मैं ठीक कहती हूं। कर्म्म एक प्रकारसे दुर्ज्ञेय हैं इसमें सन्देह नहीं। सब जीवगण तो कर्म्मोंके वशीभूत होते ही हैं और हे देवगण ! तुम लोग जगत्‌के नियामक और महान् होनेपर भी सुदृढ़ कर्म्मबन्धनसे युक्त हो। हे देवतागण ! इसमें क्या कहा जाय, यहां तक कि, मैं भी अपनी इच्छासे अवतार धारण करती हुई कर्ममें बंध जाती हूं; इसमें कुछ विचारनेकी बात नहीं है। हे देवगण ! मेरे ज्ञानी भक्त जीवन्मुक्त महात्मा जो जीवित-

तेऽपि नैव विमुच्यन्ते ध्रुवं कर्म्मप्रभावतः ।
जीवन्मुक्तैर्हि मद्भक्तैर्ज्ञानिभिश्चापि भुज्यते ॥
जैवकर्म्मस्वरूपं वै प्रारब्धं कर्म्म निश्चितम् ।
प्रारब्धकर्म्मभिर्यस्माद्भोगादेव प्रणश्यते ॥
वासनासंक्षयान्नूनं कर्म्मणः सहजस्य वै ।
निघ्नतां यान्ति ते मुक्ताः परसौभाग्यशालिनः ॥
जीवन्मुक्ता महात्मानो यतः स्युर्मत्परायणाः ।
ततो किमप्यनिच्छन्तो विचरन्ति महीतले ॥
कर्म्मणः सहजस्यामी निघ्नाः सन्ति यतः सुराः ! ।
भवद्दैवक्रियाणां ते केन्द्रीभूता भवन्त्यतः ॥
अहं यद्यपि भक्तेभ्यो ज्ञानिभ्यो हि किमप्यणु ।

दशामें ही मेरी सायुज्य दशाको प्राप्त हो जाते हैं, वे भी कर्मके प्रभावसे अवश्य ही बच नहीं सके। मेरे जीवन्मुक्त ज्ञानी भक्तोंको भी जैवकर्मरूपी प्रारब्धकर्मका भोग अवश्य ही करना पड़ता है, क्योंकि प्रारब्धका भोगसे ही क्षय होता है। वासनानाश हो जानेसे उन परमसौभाग्यशाली मुक्तोंको सहजकर्म्मके ही अधीन बनना पड़ता है, क्योंकि वे जीवन्मुक्त महात्मा मत्परायण होनेसे इच्छारहित होकर पृथिवीपर विचरते हैं। हे देवतागण! वे सहजकर्म्मके अधीन होनेके कारण तुम्हारी दैवी क्रियाओंके भी केन्द्र बन जाते हैं। हे देवगण! यद्यपि मैं ज्ञानी भक्तोंको कभी भी किसी प्रकारसे अणुमात्र भी क्लेश

कदाचिदप्यहो कष्टं दातुं नैवोत्सहे सुराः ! ॥
तथापि रुचितस्तेषां तान् संयोज्यैशकर्म्मणा।
तैर्भुवं विश्वकल्याणं कारयेऽहमतन्द्रितैः ॥
माहात्म्यं कर्म्मणो देवाः ! सर्वश्रेष्ठत्वमाश्रितम्।
कर्म्म भक्ता अपि त्यक्तुं प्रभवो ज्ञानिनोऽपि न ॥
यावद्देह न कोऽपीशः कर्म्म त्यक्तुमशेषतः।
कर्मयोगाश्रितैस्तस्माद्भवद्भिमत्परायणैः ॥
प्रतिभैवम्विधा शुद्धा नूनमुत्पाद्यतां सुराः !।
कर्म्मण्यकर्म्म पश्यन्तो यथाऽकर्म्मणि कर्म्म च ॥
कर्त्तव्यं कर्म्म कुर्वन्तो विमुक्ताः कर्म्मबन्धनात्।
मत्सायुज्यदशामेत्य कृतकृत्यत्वमाप्नुत ॥

पहुंचाना नहीं चाहती, परन्तु यदि उनकी रुचि अनुकूल होती है, तो मैं उनको ऐशकर्मसे युक्त करके उन उद्योगियोंसे जगत्का कल्याण निश्चय कराती हूं। हे देवतागण! कर्मोंकी महिमा सर्वोपरि है, क्योंकि भक्तको भी कर्म्मी बनना पड़ता है और ज्ञानीको कर्मी बनना पड़ता है और शरीर रहते हुए पूर्णरीत्या कर्म्मका त्याग असम्भव है. इस कारण हे, देवतागण! आपलोग कर्म्मयोगी और मत्परायण होकर ऐसी शुद्ध प्रतिभा निश्चय ही उत्पन्न करो जिससे तुमलोग कर्ममें अकर्म और अकर्ममें कर्म देखते हुए और कर्तव्यकर्म करते हुए कर्मबन्धनसे मुक्त हो जाओ और मत्सायुज्यको प्राप्त होकर कृतकृत्य हो जाओ।

प्रश्नः—

कर्मणा सह धर्मस्य मिश्रसम्बन्धसत्त्वेऽपि किं तत् गुहायां निहितं धर्मतत्त्वं ? तत्स्वरूपं जिज्ञासामहे, तस्य कृपया क्रियताम् सविस्तरवर्णनम्।

समाधानम्—

सगुणब्रह्मरूपो भगवान् धीशः श्रीगणपतिः भवत्प्रश्न-सम्बन्धे ऋषीन् उद्दिश्य यदुवाच तदेव कथयामि—

ब्राह्मणाः! नयते नूनं सर्वलोकहितप्रदः।
ब्रह्माण्डपिण्डरूपायाः सृष्टेश्च धारको महान्॥
मानवान् धर्म एवायं कैवल्याभ्युदयप्रदः।

प्रश्न—

कर्म्मके साथ धर्म्मका मिश्रसम्बन्ध होनेपर भी धर्म्म-तत्त्व जो कि—गुहामें निहित है, उसका स्वरूप जाननेकी इच्छा है। कृपया विस्तार पूर्वक वर्णन करें।

उत्तर—

श्री धीशगीतामें सगुणब्रह्मस्वरूप श्रीगणपति धीश भगवान्ने ऋषियोंसे जो आज्ञा की है, सो आप लोगोंसे कहा जाता है।

हे ब्राह्मणों! सर्वलोक हितकर ब्रह्माण्ड पिण्डात्मक सृष्टिका धारक अभ्युदय और मुक्तिविधायक यह महान् धर्म ही मनुष्योंको अज्ञान भूमियोंसे बचाकर ज्ञान भूमियोंमें निर-

संरक्ष्याऽज्ञानभूमिभ्यो ज्ञानभूमीर्निरन्तरम् ॥
ददन्नाभ्युदयं सम्यक सम्प्रापय्यान्तिमां क्रमात् ।
ज्ञानभूमिं ततो दत्ते निःश्रेयसमहो परम् ॥
अहमेवास्मि धर्म्मस्य स्थितिस्थानं द्विजर्षभाः ! ।
धर्म्माकृतिर्ममैवास्ते शक्तिरेव सनातनी ॥
विराट्सृष्टेः प्रवाहस्य धारणं कृतवत्यहो ।
ममैव सात्त्विकी शक्तिर्नूनं धर्मो महर्षयः ! ॥
नाऽत्र कश्चन सन्देहो विद्यते द्विजसत्तमाः ! ।
विद्यते विप्रशार्दूलाः ! शक्तिर्मे त्रिगुणात्मिका ॥
आकर्षणविशिष्टा या सा शक्ती राजसी मता ।
विकर्षणेन संसक्ता शक्तिर्मे तामसी तथा ॥

न्तर ही पहुंचा देना है और क्रमशः अभ्युदयको सम्यक् प्रदान करता हुआ अन्तिम ज्ञानभूमिमें पहुँचा कर अहो ! तदनन्तर कैवल्य प्रदान करता है । हे विप्रों ! मैं धर्म्म कार्यमें ही स्थिति स्थान हूँ और धर्म्मरूपा मेरी ही सनातनी शक्ति अहो ! विराट् सृष्टिके प्रवाहको निश्चय ही धारण किये हुए है । हे महर्षिगण ! निश्चय मेरी ही सत्त्वगुणमयी शक्ति धर्म्म है । हे ब्राह्मण श्रेष्ठों ! इस विषयमें कोई सन्देह नहीं है । हे विप्रपुङ्गवों ! मेरी शक्ति त्रिगुणात्मिका है । आकर्षण शक्तिविशिष्ट राजसिक शक्ति कहाती है और विकर्षण शक्तिविशिष्ट तामसिक शक्ति कहलाती है और इन दोनों शक्तियोंका इस

सामञ्जस्यं प्रकुर्वाणा तयोः शक्त्योर्द्वयोरिह ।
सात्त्विकी सैवधर्मोऽस्ति शक्तिर्मे नाऽत्र संशयः ॥
परिव्याप्नोति धर्मस्य शक्तिरेषैव धारिका ।
परमाणुभ्य आ नूनं पूर्णां ब्रह्माण्डविस्तृतिम् ॥
शक्तेः संधारिकाया मे धर्म्मस्यैव प्रभावतः ।
सूर्येन्द्वादिग्रहाः सर्वे तथा नक्षत्रमण्डलम् ॥
उपग्रहादयोऽप्येवं विराड्देहे ममानिशम् ।
स्वस्वकक्षामुपाश्रित्य भ्रमन्ते हि समन्ततः ॥
सृष्टेरक्षाञ्च कुर्वन्ति साहाय्यं ददतो मिथः ।
देवासुरेण युद्धेन दैव्याः सृष्टेः पवित्रताम् ॥
सम्पादयन्ती धर्म्मस्य धारिका शक्तिरुत्तमा ।

संसारमें समन्वय करनेवाली मेरी जो सात्त्विक शक्ति है वही धर्म है। इसमें सन्देह नहीं। यही धर्मकी धारिका शक्ति परमाणुसे लेकर ब्रह्माण्डके विस्तार पर्यन्तमें परिव्याप्त है। धर्मकी धारिका शक्तिके प्रभावसे ही सब सूर्य्य चन्द्रादि ग्रह उपग्रहादि और नक्षत्रमण्डल मेरे विराट् देहमें चौतरफ अपनी अपनी कक्षामें निरन्तर परिभ्रमण करते हैं और परस्परमें सहायता देकर सृष्टिकी रक्षा करते हैं। धर्मकी उत्तम धारिका शक्ति देवासुरसंग्रामके द्वारा दैवी सृष्टिकी पवित्रता सम्पादन करती हुई देवताओं और असुरोंको अपने अपने लोकोंमें सुप्रतिष्ठित रखता है। हे विप्रो! मेरी

प्रतिष्ठापयते देवान् स्वस्वलोकेऽसुरांस्तथा ॥
निश्चितं मातृभावेन विज्ञाः ! धर्ममयेन मे ।
प्रकृतेः पालिता जीवा पोषिताश्च निरन्तरम् ॥
उद्भिज्जात्स्वेदजं गत्वा स्वेदजादण्डजं तथा ।
ततोगच्छन्त्यहो विप्राः ! अण्डजाच्च जरायुजं ॥
जरायुजाद्योनितो हि मर्त्ययोनिं गता पुनः ।
भवन्ति मोक्षमार्गस्य नूनमेतेऽधिकारिणः ॥
ज्ञानं हि धर्म्माधर्मस्य मानवेभ्यो हि केवलम् ।
कृतास्ते मोक्षमार्गस्य पथिका ददता मया ॥
धारिकाशक्तिरेवासौ धर्मस्य विप्रपुंगवाः ! ।
क्रमादुन्नमयन्ती वै मानवानुत्तरोत्तरम् ॥

प्रकृतिके धर्ममय मातृभावके द्वारा ही निरन्तर पालित पोषित होकर जीव हे विप्रो ! उद्भिज्जसे स्वेदज स्वेदजसे अण्डज अण्डजसे जरायुज और जरायुजयोनिसे मनुष्ययोनिमें पहुंच कर अवश्य ही वे कैवल्य मार्ग अर्थात् मोक्षमार्गके अधिकारी बन जाते हैं । मैंने केवल मनुष्योंको ही धर्माधर्मका ज्ञान प्रदान करके उनको *कैवल्यमार्गका पथिक बना दिया है।* हे विप्र-श्रेष्ठो ! यह धर्मकी धारिका शक्ति ही मनुष्योंको क्रमशः उत्तरो त्तर उन्नति करा कर ही और अहो ! अन्तमें उनको ज्ञान भूमिका अधिकारी बनाकर शनैः शनैः कैवल्यपद प्रदान करती है।

कृत्वाऽधिकारिणो ज्ञानभूमेरन्ते च तानहो।
कैवल्यपदवीं तेभ्यः प्रदत्ते च शनैः शनैः॥
सर्वेषां रक्षको धर्मः सर्वजीवहितप्रदः।
निखिलव्यापकश्चाऽस्ति सर्वेभ्योऽभ्युदयप्रदः॥
सर्वेषां मानसे नूनं मत्स्वरूपप्रकाशकः।
साधकानां हि जीवानां शिवत्वस्य विधायकः॥

प्रश्न —

कतिविधो धर्मः ?।

समाधानम् —

पितृभिर्जिज्ञासितो भगवान् सदाशिवो यद्वोचत् तदिह लोकहितार्थं भवत उपदिशामि, दत्तावधानं श्रूयताम्।

धर्म सर्व्वव्यापक सर्वजीवहितकारी सर्वरक्षक सबको अभ्युदयप्रद और सबके हृदयमें मेरे स्वरूपका प्रकाश करने वाला एवं साधक जीवोंको शिवत्व प्रदान कारक है।

प्रश्नः —

धर्म कितने प्रकारका है उसका कृपापूर्वक वर्णन कीजिये-

उत्तर—

श्रीभगवान् सदाशिवने शम्भुगीतामें जो निज मुखसे पितरोंसे कहा है, सो जगत्कल्याणके लिये मैं आप लोगोंसे कहता हूं।

समष्टिव्यष्टिरूपाभ्यां सृष्टेः सन्धारिका मम।
शक्तिर्नियामिका सैव ध्रुवं धर्म्मः सनातनः॥
तत्सनातनधर्मस्य पादाश्चत्वार आसते।
साधारणविशेषौ हि तथाऽसाधारणापदौ॥
सार्वभौमो यतो धर्मः सर्वलोकहितप्रदः।
ददात्यभ्युदयं नित्यं सुखं निःश्रेयसं तथा॥
शाश्वतस्यास्य धर्मस्य यावत्प्रादुर्भविष्यति।
सार्वभौमस्वरूपं हे पितरो भाग्यशालिनः!॥
जनानां क्षुद्रता लोके तावत्येव विनङ्क्ष्यति।
साधारणस्य धर्मस्य तत्त्वतो हृदयङ्गमम्॥
सार्वभौमस्वरूपं हि कर्तुमर्हं न संशयः।

समष्टि और व्यष्टिरूपसे सृष्टिको धारण करनेवाली जो मेरी नियामिका शक्ति है, उसीको सनातनधर्म कहते हैं। उस सनातन धर्मके चार पाद हैं, यथा साधारणधर्म, विशेषधर्म, असाधारणधर्म और आपद्धर्म। धर्म सार्वभौम और सर्वलोकहितकर होनेसे वह निरन्तर अनायास अभ्युदय और निःश्रेयस प्रदान करता है। हे भाग्यशाली पितृगण! इस सनातनधर्मका सार्वभौमस्वरूप जितना प्रकट होगा, संसारमें मनुष्यों-की क्षुद्रता उतनी ही नष्ट होगी। तत्त्वतः साधारण-धर्मका सार्वभौम स्वरूप निःसन्देह हृदयङ्गम करने योग्य है और उसी प्रकार वर्णाश्रमधर्मसम्बन्धी विशेष

पालनीया सदाचारा आर्यजातीयमानवैः ॥
वर्णाश्रमीयधर्मस्य विशेषस्य तथैव च ।
यतो वर्णाश्रमैर्धर्मैर्विहीना सर्वथा ननु ॥
असौ सृष्टिर्मानवानां कालिकायाः प्रभावतः ।
प्रकृतेर्मे लयं याति कुत्रचित्समये स्वतः ॥

अयि मुनिवर्य्याः ! ये च श्रीभगवता सदाशिवेन चतुर्विधा वर्णिता धर्मभेदाः, तत्र वर्णाश्रमधर्मः, नारी-पुरुषधर्मः, राज-प्रजा धर्मः, आर्य्यानार्य्यधर्म इत्यादीनि विशेषधर्मोदाहरणानि सन्ति। द्रौपद्याश्च पञ्च पतिग्रहणं, जन्मान्तरमनुपलभ्यैव महर्षिविश्वामित्रस्य ब्राह्मणत्वप्राप्तिः नन्दीश्वरस्य च देवत्वाधिगम इत्यादि असा-

---

धर्मके सदाचार भी आर्यजातीय मनुष्योंसे पालन कराने योग्य हैं; क्योंकि वर्णाश्रमधर्मरहित यह मनुष्यसृष्टि स्वतः मेरी प्रकृति कालीके प्रभावसे किसी समयान्तरमें सर्वथैव लयको प्राप्त हुआ करती है।

हे मुनिगण ! भगवान् सदाशिवने जो चार प्रकारका धर्म वर्णन किया है उसमेंसे विशेष धर्मके उदाहरणमें वर्णधर्म आश्रमधर्म पुरुषधर्म नारीधर्म ब्राह्मणधर्म क्षत्रियधर्म वैश्यधर्म शूद्रधर्म ब्रह्मचर्यधर्म गार्हस्थ्यधर्म वानप्रस्थधर्म सन्न्यासधर्म आर्यधर्म अनार्यधर्म राजधर्म प्रजाधर्म आदि समझने योग्य हैं। असाधारणधर्मके विषयमें द्रौपदीका पञ्चपति ग्रहण, महर्षि विश्वामित्रका क्षत्रियसे ब्राह्मण होना

धारणधर्मोदाहरणमवगन्तव्यम् । विश्वामित्रस्य श्वानमांसग्रहणं, महाराजहरिश्चन्द्रस्य चाण्डालदासत्वञ्चेत्यादि आपद्धर्मोदाहरणं जानन्तु । परन्तु अन्यदेव हि वैचित्र्यं विद्यते साधारणधर्मस्य । एतस्य सर्वजीवहितकारकं स्वरूपं देवान् प्रति महामायया शक्तिगीतायामेवमभिहितम्—

अहमेवास्मि भो देवाः ! धर्मकल्पद्रुमस्य च ।
बीजं मूलं तथाऽऽधारो नात्र कश्चन संशयः ॥
स्कन्धस्तस्य द्रुमस्यास्ते धर्मो वै विश्वधारकः ।
मुख्यं शाखात्रयश्चास्य यज्ञो दानं तपस्तथा ॥

सम्बन्धीका पकड़ी जानामें देवता होना इत्यादि समझने योग्य है और आपद्धर्मके उदाहरणमें दुर्भिक्षके समय महर्षि विश्वामित्रका कुक्कुरमांस ग्रहण करना, महाराजा हरिश्चन्द्रकी चाण्डालसेवा आदि समझना उचित है; परन्तु साधारणधर्मकी विचित्रता कुछ और है, जिसका सर्वजीव हितकारी स्वरूप जगज्जननी महामायाने निजमुखसे धर्मवृक्षके रूपमें देवताओंसे शक्तिगीतामें कहा है, सो उनके वचन कहे जाते हैं ।

हे अमरगण ! मैं ही धर्मकल्पद्रुमका बीज भी हूँ, मूल भी हूँ और आधार भी हूँ, इसमें कुछ सन्देह नहीं है । उस वृक्षका स्कन्ध विश्वधारक धर्म ही है । उसकी प्रधान तीन शाखाएँ हैं, यथा—यज्ञ, तप और दान । अर्थदान ब्रह्मदान और अभयदानके

अभयाभ्योऽभयदानानि देवाः ! त्रैगुण्ययोगतः।
दानस्य प्रतिशाखाः स्युर्नवधा नात्र संशयः॥
तपोऽपि त्रिविधं ज्ञेयं कायवाणीमनोभवम्।
त्रैगुण्ययोगेनास्यापि प्रतिशाखा नवासते॥
प्रतिशाखा अनेकाः स्युर्यज्ञशाखासमुद्भवाः।
काम्याध्यात्माधिदैवाधिभूतनैमित्तनित्यकाः॥
कर्म्मयज्ञप्रशाखाया भेदास्त्रैगुण्ययोगतः।
त एवाष्टादशास्या हि प्रतिशाखा मनोहराः॥
पितृदेवर्षिवृन्दानामवतारगणस्य च।
पञ्चानां सगुणब्रह्मरूपाणां निर्गुणस्य च॥
ब्रह्मणश्चासुरौघाणामुपास्तेः पञ्च भक्तिज।

त्रिगुणात्मक होनेसे दानकी नौ प्रतिशाखाएँ हैं, हे देवगण! इसमें सन्देह नहीं है। शारीरिक तप, वाचनिक तप और मानसिक तपके त्रिगुणात्मक होनेसे तपोधर्मकी नौ प्रतिशाखाएँ हैं। यज्ञशाखासे उत्पन्न प्रतिशाखाएँ अनेक हैं। नित्य नैमित्तक काम्य और अध्यात्म अधिदैव अधिभूत, ये कर्म्मयज्ञरूपा प्रशाखाओंके भेद हैं, इनके त्रिगुणात्मक होनेसे कर्म्मयज्ञकी मनोहर अट्ठारह प्रतिशाखाएँ हैं। उपासना-यज्ञके आसुरी उपासना, ऋषि देवता और पितरोंकी उपासना, अवतारोंकी उपासना, पंच सगुणब्रह्मरूपोंकी उपासना और निर्गुणब्रह्मोपासना, ये पांच भक्तिसम्बन्धी भेद हैं और योगके

मन्त्रो हठो लयो राज एते योगेन च ध्रुवम् ॥
अस्या भेदाश्च चत्वारो भेदा एवं नवासते।
एते भेदा नवैवाहो देवाः ! त्रैगुण्ययोगतः ॥
उपास्तेः प्रतिशाखाः स्युः सङ्ख्यया सप्तविंशतिः।
श्रवणं मननञ्चैव निदिध्यासनमेव च ॥
त्रयोऽमी ज्ञानयज्ञस्य भेदास्त्रैगुण्ययोगतः।
नवधा सम्विभक्ता हि प्रतिशाखा नवासते ॥
द्विसप्तत्या प्रशाखाभिः शाखाभिश्चैवमेव भोः ?।
निजानां ज्ञानिभक्तानां धर्म्मकल्पद्रुमात्मना ॥
विराजे स्वान्तदेशेऽहं निर्ज्जराः ! नात्र संशयः।
धर्म्मकल्पद्रुमस्यास्य पत्रपुष्पात्मकान्यहो ॥

अनुसार उपासनाके मन्त्र हठ लय राज ये चार भेद हैं, इस प्रकारसे इन्हीं नौ भेदोंके त्रिगुणात्मक होनेसे हे देवगण ! उपासनाकी सताईस प्रतिशाखाएँ हैं। ज्ञानयज्ञके श्रवण मनन निदिध्यासन ये तीन भेद त्रिगुणसम्बन्धसे नवधा विभक्त होकर, नौ प्रतिशाखाएँ होती हैं। हे देवतागण ! इस प्रकारसे मैं ही बहत्तर शाखा और प्रतिशाखाओंमें धर्म्मकल्पद्रुमरूपसे अपने ज्ञानी भक्तके हृद्देशमें निःसन्देह विराजमान हूं। उस धर्म्मकल्पद्रुमके पत्र-पुष्परूपी उपाङ्गोंकी तो संख्या ही किसीसे कभी नहीं हो सकी, वे अतिमनोहर और विचित्र हैं। उस रम्य

उपाङ्गानि न संख्यातुमर्होणि कैरपि कचित्।
विचित्राणि मनोज्ञानि सन्ति तानि ध्रुवं सुराः! ॥
पक्षिणौ द्वौ सदा तत्र जगतां मोहकारिणौ।
मनोज्ञे वृक्षराजे स्तो वसन्तौ शाश्वतीः समाः ॥
स्वादतेऽभ्युदयस्यैको ह्यपक्वे द्वे फले तयोः।
अपरश्चतुरः पक्षी सुपक्वं त्वमृतं फलम् ॥
सुस्वाद्वास्वाद्य गीर्वाणाः! नूनं निःश्रेयसं पदम्।
ब्रह्मानन्दसमुल्लास-सार्थकत्वं प्रकाशयेत् ॥

प्रश्नः—

हे ज्ञानस्वरूप महर्षिप्रवर! सम्प्रति कृपया वर्णाश्रमधर्मरहस्यं वर्ण्यताम्। तत् किल श्रोतुम् अतीवोत्कण्ठतेऽस्माकं चेतः।

वृक्षराजपर जगन्मुग्धकारी दो पक्षी सदा अनन्तकालसे निवास करते हैं। उनमेंसे एक पक्षी अभ्युदयके दो कच्चे फलोंका स्वाद ग्रहण करता है और दूसरा चतुर पक्षी निःश्रेयसपदरूपी सुपक्व और सुस्वादु अमृत फलका आस्वादन करके हे देवगण! ब्रह्मानन्द-समुल्लासकी चरितार्थताको निश्चय ही प्रकाशित करता है।

प्रश्न—

त्रिलोक पवित्रकर वर्णाश्रमधर्म्मकी महिमा तथा उसका दृढ़ विज्ञान कुछ सुननेकी इच्छा है कृपापूर्वक वर्णन करें।

समाधानम्—

एतत्प्रश्नसम्बन्धे शम्भुगीतायां पुरतः पितॄणां भगवता सदाशिवेन यदुक्तम्, तदेवम्—

अत्रैकोपनिषद्दृश्यमन्तिके वः स्वधाभुजः!।
गुह्यं प्रकाशयेऽत्यन्तमद्भुतं तत्प्रपश्यत॥
श्यामायाः प्रकृतेर्मत्तो द्वे रूपे परमाद्भुते।
यतः सैव जडा जीवभूता चैतन्यमय्यपि॥
अज्ञानपूर्णरूपेण जड़रूपं धरन्त्यसौ।
सृष्टिं प्रकाशयेच्छश्वन्नात्र कश्चन संशयः॥
असौ चैतन्यपूर्णा च भूत्वा स्रोतस्विनी मम।

उत्तर—

श्रीभगवान् सदाशिवने शम्भुगीतामें जो निजमुखसे पितरोंसे कहा है सो जगत् कल्याणके लिये मैं आपलोगोंसे कहता हूँ।

हे पितृगण! इस सम्बन्धमें मैं उपनिषद्का एक अद्भुत रहस्य पूर्ण दृश्य आपके सामने प्रकट करता हूं देखो। मेरी श्यामा प्रकृतिके दो रूप हैं। वही जड़रूपा है और वही जीवभूता चेतन मयी है वह अज्ञान पूर्णरूपमें जड़रूप धारण करके सदा सृष्टिको प्रकट करती है इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

स्वस्वरूपात्मके नित्य पारावारे विशत्यहो ॥
सरिन्निर्गत्य चिद्रूपा सा महाद्रेर्जडात्मकात् ।
उद्भिज्जे स्वेदजे चैवमण्डजे च जरायुजे ॥
सलीलं खातरूपेऽस्य प्रवहन्ती स्वधाभुजः ! ।
मर्त्यलोकाधित्यकायां निर्बाधं व्रजति स्वय ॥
तस्या अधित्यकाया हि निम्नस्याश्चैकपार्श्वतः ।
उपत्यका महत्यश्च विद्यन्ते गह्वरादयः ॥
यत्र तस्याः पवित्रायास्तरङ्गिण्या जलं स्वतः ।
स्थाने स्थाने वहन्नित्यं निर्गच्छति स्वभावतः ॥
अव्याहतं च नीरन्ध्रमविच्छिन्नं निरापदम् ।
स्रोतस्तन्नितरां कृत्वा नदीधारां धरातले ॥
विधातुं सरलां सौम्यामष्टवन्धाः स्वधाभुज ! ।

मैं ही चेतनमयी स्रोतस्विनी होकर मेरे स्व स्वरूप पारावारमें प्रवेश करती हूं। वह चिन्मयी नदी जड़मय महापर्वतसे निकलकर प्रथम उद्भिज्ज, तदनन्तर स्वेदज, तदनन्तर अण्डज, तदनन्तर जरायुज नामधारी खादमें सरलतासे बहती हुई मनुष्य लोकरूपी अधित्यकामें पहुँचती है। उस अधित्यकाके नीचे महती उपत्यकाएँ और गह्वर आदि विद्यमान है। जिनमें उस पवित्र तरङ्गिणीका जल स्थान स्थानपर स्वतः ही वह जाया करता है। हे पितृगण! उस स्रोतको अप्रतिहत नीरन्ध्र और अविच्छिन्न रखकर नदीकी धाराको धरातलपर सरल

धर्म्मा वर्णाश्रमा एव निर्मिता नाऽत्र संशयः ॥
त्रिलोकपावनी दिव्या सा नदी सुगमं हितं।
पन्थानमवलम्ब्यैव परमानन्दलब्धये ॥
मयि नित्यं प्रकुर्वाणा प्रवेशं राजतेतराम्।
नैवात्र विस्मयः कार्य्यो भवद्भिः पितृपुङ्गवाः! ॥
निर्जरा निखिलास्तस्यां नद्यामानन्दपूर्वकम्।
सर्व्वदैवावगाहन्ते लभन्तेऽभ्युदयञ्च ते ॥
उभयोस्तटयोस्तस्याः समासीना महर्षयः।
ब्रह्मध्याने सदा मग्ना यान्ति निःश्रेयसं पदम् ॥
यूयं दार्ढ्याय बन्धानां तेषाञ्चैव निरन्तरम्।
रक्षितुं तान् प्रवर्त्तन्ते पार्श्वमेषामुपस्थिताः ॥

रखनेके लिये वर्ण और आश्रमके आठ बन्ध रक्खे गये हैं। इसी कारण वह अलौकिक त्रिलोकपावनी नदी सरल पथको अवलम्बन करके मुझमें परमानन्द प्राप्तिके हेतु प्रवेश करती है। हे पितृगण! इसमें आप लोग विस्मित न होवें। देवतागण उस नदीमें आनन्दपूर्वक अवगाहन करके अभ्युदयको प्राप्त होते हैं और ऋषिगण उस नदीके दोनों तटोंपर समासीन तथा ब्रह्मध्यानमें मग्न होकर निःश्रेयस पदको प्राप्त होते हैं। आप लोग निरन्तर उन बन्धनोंको सुदृढ रखनेके लिये उनके पास रहकर उनकी रक्षा करनेमें प्रवृत्त हो और आपके इस

भवनामङ्गकार्ये च विश्वमङ्गलकारके ।
सदाचारिद्विजाः सन्ति सती नार्यः सहायिकाः ॥

प्रश्नः—

धर्मकर्मणोरतिदुर्ज्ञेयरहस्यानि श्रुत्वा कियन्तमानन्दमधिगत-वन्त इति न कथयितुं शक्नुमः । साम्प्रतं हि धर्मकर्मणोः परम-सहायिकाया उपासनाया रहस्यं श्रावणीय, येनास्माकं जगतश्च महानुपकारः स्यादिति ।

समाधानम्—

गुरुगीतायां भगवता श्रीमहादेवेन एवमभिहितम् ।
सगुणो निर्गुणश्चाऽपि द्विविधो भेद ईर्यते ।
उपासना विवेकैश्च सगुणोऽपि द्विधा मतः ॥
सकामोपासनायाश्च भेदा यद्यपि नैकशः ।

जगन्मङ्गलकर शुभ कार्यमें सदाचारी ब्राह्मणगण और सती नारियां सहायक हैं ।

प्रश्न—

कर्म और धर्मके अतिदुर्ज्ञेय रहस्यसमूह सुनकर बहुत ही आनन्दकी प्राप्ति हुई, अब कृपया कर्म और धर्मकी परम सहायक उपासनाका कुछ रहस्य ऐसा वर्णन करें कि, जिससे जगत्का कल्याण हो ।

उत्तर—

श्रीगुरुगीतामें श्रीभगवान् महादेवने इस प्रकार कहा है—

उपासनाके दो भेद हैं, यथा—निर्गुण उपासना और सगुण उपासना । सगुण उपासना दो प्रकारकी है । यद्यपि

परन्त्वनन्यभक्तानां जनानां मुक्तिमिच्छताम् ॥
भेदत्रितयमेवैतद्रहस्यं देवि गोपितम् ।
वक्ष्ये गुप्तरहस्यं तद्भवतीं भाग्यशालिनीम् ॥
समाहितेन शान्तेन स्वान्तेनैवावधार्यताम् ।
पञ्चानामपि देवानां ब्रह्मणो निर्गुणस्य च ॥
लीलाविग्रहरूपाणां चेत्युपास्तिस्त्रिधा मता ।
विष्णुः सूर्यश्च शक्तिश्च गणाधीशश्च शङ्करः ॥
पञ्चोपास्याः सदा देवि सगुणोपासनाविधौ ।
एते पञ्च महेशानि सगुणो भेद ईरितः ॥
सच्चिदानन्दरूपस्य ब्रह्मणो नाऽत्रसंशयः ।
निर्गुणोऽपि निराकारो व्यापकः स परात्परः ॥
साधकानां हि कल्याणं विधातुं वसुधातले ।

सकाम उपासनाके और भी अनेक भेद हैं, परन्तु मुक्तिकी इच्छा रखनेवाले अनन्य भक्तके लिये केवल ये तीन ही भेद हैं। यह तुमसे मैं गुप्त रहस्य कह रहा हूं। सावधान होकर सुनो। निर्गुण उपासना, सगुण पञ्चोपासना और लीला-विग्रह उपासना, इस प्रकारसे तीन भेद माने गये हैं। शिव-गणेश शक्ति सूर्य्य और विष्णु ये पञ्च उपास्य सगुणरूप पञ्च-सगुणोपासनाके माने गये हैं। ये पाँचो सच्चिदानन्दमय-ब्रह्मके ही सगुण भेद हैं यह निःसन्देह है। परमात्मा निरा कार निर्गुण और व्यापक होनेपर भी साधकके कल्याणार्थ

विभर्त्ति सगुणं रूपं त्वत्साहाय्यात्पतिव्रते ॥
यथा गवां शरीरेषु व्याप्तं दुग्धं रसात्मकम् ।
परं पयोधरादेव केवलं क्षरते ध्रुवम् ॥
तथैव सर्व्वव्यापीऽपि देवो व्यापकभावतः ।
दिव्यषोडशदेशेषु पूज्यते परमेश्वरः ॥
वह्न्यम्बुलिङ्गकुड्यानि स्थण्डिलं पटमण्डले ।
विशिखं नित्ययन्त्रञ्च भावयन्त्रञ्च विग्रहः ॥
पीठञ्चापि विभूतिश्च हृन्मूर्द्धापि महेश्वरि ।
एते षोडश दिव्याश्च देशा प्रोक्ता मयानघे ॥

तुम्हारी सहायतासे सगुणरूप धारण किया करते हैं। जिस प्रकार गायके सब शरीरमें रसरूपसे दुग्ध व्याप्त है, परन्तु केवल स्तनके द्वारा ही वह निःसरण होता है; उसी प्रकार परमात्मा सर्वव्यापक होनेपर भी सोलह दिव्य देशोंमें पूजे जाते हैं। वन्हि अम्बु लिङ्ग स्थण्डिल कुड्य पट मण्डल विशिख नित्ययन्त्र भावयन्त्र पीठ विग्रह विभूति नाभि हृदय और मूर्द्धा ये सोलह दिव्य देश कहाते हैं * इन सोलह दिव्य

* सनातनधर्मावलम्बी मूर्त्तिकी पूजा नहीं करते हैं। परन्तु इन सोलह दिव्य देशोंमें सर्वव्यापक परमात्माकी पूजा करते हैं। इन सोलह दिव्य देशोंमेंसे मूर्ति एक दिव्य देश है।

यद्यच्छरीरमाश्रित्य भगवान् सर्व्वशक्तिमान्।
वतीर्णो विविधा लीला विधाय वसुधातले॥
जगत्पालयते देवि लीलाविग्रह एव सः।
उपासनानुसारेण वेदशास्त्रेषु भूरिशः॥
लीलाविग्रहरूपाणामितिहासोपि लभ्यते।
तदुपासनकञ्चापि सगुणं परिकीर्तितम्॥
विष्णोः सूर्यस्य शक्तेश्च गणेशस्य शिवस्य च।
गीतासु गीता ये शब्दा विष्णुसूर्यादयः प्रिये॥
ब्रह्मणश्चाद्वितीयस्य साक्षात्ते चापि वाचकाः।
भक्तिस्तु त्रिविधा ज्ञेया वैधी रागात्मिका परा।

देशोंमें जैसा गुरूपदेश हो, साधक परमात्माकी पूजा करके मुक्तिपद लाभ करता है। जिन अवतार शरीरोंको धारण करके सर्वशक्तिमान् भगवान् तुम्हारी सहायतासे नाना लीला करके संसारकी रक्षा करते हैं, वे रूप ही लीला विग्रह कहाते हैं। पञ्चोपासनाके अनुसार वेद और शास्त्रोंमें अनेक लीला-विग्रह धारणके इतिहास पाये जाते हैं, उनकी उपासना भी सगुण उपासना कही जाती है। शिवगीता (शम्भुगीता) गणेशगीता (धीशगीता) देवीगीता (शक्तिगीता) सूर्यगीता और विष्णुगीताके प्रतिपाद्य शिव गणेश देवी सूर्य और विष्णु ये सब एक ही अद्वितीय परब्रह्मके ही वाचक हैं। भक्तिके तीन भेद हैं, यथा-वैधी भक्ति, रागात्मिकाभक्ति,

देवे परोऽनुरागस्तु भक्तिः सम्प्रोच्यते बुधैः॥
विधिना या विनिर्णीता निषेधेन तथा पुनः।
साध्यमाना च या धीरैः सा वैधी भक्तिरुच्यते॥
यथास्वाद्य रसान्भक्तेर्भावे मज्जति साधकः।
रागात्मिका सा कथिता भक्तियोगविशारदैः॥
परानन्दप्रदा भक्तिः पराभक्तिर्मता बुधैः।
या प्राप्यते समाधिस्थैर्योगिभिर्योगपारगैः।
त्रैगुण्यभेदात्त्रिविधा भक्ता वै परिकीर्त्तिताः।
आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी तथा त्रिगुणतः परः।
पराभक्त्यधिकारी यो ज्ञानिभक्तः स तुर्यकः॥
उपासकाः स्युस्त्रिविधास्त्रिगुणस्यानुसारतः।

और पराभक्ति। अपने इष्टदेवमें ऐकान्तिक अनुरागको धीर पुरुष भक्ति कहते हैं। विधिनिषेध द्वारा निर्णीत और साध्यमान भक्तिको वैधी कहते हैं, भक्तिरसका आस्वादन कराकर साधकको भावविशेषमें निमग्न करानेवाली भक्ति रागात्मिका कही जाती है। परमानन्दप्रदा भक्ति पराभक्ति कहाती है, जो योगमें कुशल योगिगणको समाधि दशामें प्राप्त होती है। भक्त त्रिगुणभेदसे त्रिविध होते हैं, यथा-आर्त्त, जिज्ञासु अर्थार्थी और चतुर्थ ज्ञानी जो त्रिगुणातीत हैं। ज्ञानी भक्त ही पराभक्तिका अधिकारी हो सका है। त्रिगुणभेदसे उपासक तीन प्रकारके होते हैं। ब्रह्मोपासक सबमें श्रेष्ठ

ब्रह्मोपासक एवात्र श्रेष्ठः प्रोक्तो मनीषिभिः ॥
प्रथमा सगुणोपास्तिरवतारार्चनाश्च याः ।
विहिता ब्रह्मबुद्ध्या चेदत्रैवान्तर्भवन्ति ताः ॥
सकामबुद्ध्या विहितं देवर्षिपितृपूजनम् ।
मध्यमं मध्यमा ज्ञेयास्तत्कर्त्तारस्तथा पुनः ॥
अधमा वै समाख्याता क्षुद्रशक्तिसमर्चकाः ।
प्रेताद्युपासका ह्यत्र विज्ञेया ह्यधमाधमाः ॥
सर्वोपासनहीनास्तु पशवः परिकीर्त्तिताः ।
ब्रह्मोपासनमेवाऽत्र मुख्यं परममङ्गलम् ॥
निःश्रेयसकरं ज्ञेयं सर्वश्रेष्ठं शुभावहम् ।

हैं, ऐसा विद्वद्गणने कहा है। ब्रह्मबुद्धिसे प्रथम सगुणोपासक अर्थात् पञ्चदेवोपासक और ब्रह्मबुद्धिसे द्वितीय सगुणोपासक अर्थात् अवतारोपासक इसी श्रेष्ठ श्रेणीमें हैं। सकाम बुद्धिसे ऋषि देवता और पितरोंकी उपासना करनेवाले द्वितीय श्रेणी (मध्यम श्रेणी) के हैं और क्षुद्र शक्तियोंकी उपासना करनेवाले तृतीय श्रेणी (अधम श्रेणी) के हैं। उपदेवता प्रेतादिकी उपासना इसी निम्नश्रेणी (अधमाधम श्रेणी) की समझी जाती है। जो किसी उपासनाको नहीं करते हैं, वे पशु हैं। प्रथम श्रेणीकी उपासना अर्थात् ब्रह्मोपासना ही परम कल्याणप्रद और निःश्रेयसकर होनेके कारण सर्वश्रेष्ठ जानने योग्य है।

प्रश्नः—

कर्मोपासनयोर्मूलभित्तिस्वरूपमतिगोपनीयं पीठरहस्यं प्रकाशयतु भगवान्, यतो हि पीठस्यावलम्बनेनैव यज्ञकर्माणि उपासनाश्च साधकैः साध्यन्त इति।

समाधानम्—

श्रीभगवता सदाशिवेन शम्भुगीतायामित्थं व्याजहे—

जीवसृष्टिरहस्येषु मानवानाञ्च किंविधम्।
जन्ममृत्युगतं गुह्यं वैलक्षण्यं हि वर्त्तते॥
पितरस्तद्ब्रवीम्यद्य श्रूयतां सुसमाहितैः।
कोषः प्राणमयोऽस्यास्य साहाय्यात् पितरो ध्रुवं॥
दैव्याः शक्तेर्विकाशस्य देवानामासनस्य वा।
उपयोगी जायतेऽसावावर्त्तः पीठ उच्यते॥

प्रश्न—

कर्मकाण्ड और उपासनाकाण्डकी मूलभित्तिस्वरूप अति गोपनीय पीठ रहस्य जानेकी इच्छा है, सो कृपा करके वर्णन करें क्योंकि पीठके अवलम्बनसे ही यागयज्ञादि किये जाते हैं और पीठके अवलम्बनसे ही उपासना की जाती है।

उत्तर—

श्रीभगवान् सदाशिवने शम्भुगीतामें जो आज्ञाकी है, सो इस प्रकार है।

हे पितृगण! जीवसृष्टिरहस्योंमें मनुष्योंके जन्ममृत्युकी कैसी गुह्य विचित्रता है, सो अभी कहता हूं, सुसमाहित हो

स्वाभाविक्यस्वभावा वा पीठस्योत्पादनाय या।
विधीयते क्रिया सम्यक् सत्सुकौशलपूरिता॥
चक्रं तदेव सम्प्राहुर्योगतत्त्वविशारदाः।
नाऽत्र कश्चन सन्देहो विद्यते विश्वभूतिदाः! ॥
पीठोत्पादकसामर्थ्यं मर्त्यपिण्डो बिभर्त्यसौ।
आवागमनचक्रस्याश्रयः स्वाभाविकस्य हि॥
अनेकभेदसत्त्वेपि पीठस्यास्ति प्रधानतः।
भेदश्चतुर्विधो योऽसौ प्रोच्यते वः पुरोऽधुना॥
प्रथमं स्थावरं पीठं यथा तीर्थादिगोचरम्।
द्वितीयं सहजं पीठं दम्पती सङ्गमे यथा॥
पीठं तृतीयकं दैवमिन्द्रलोकादिकं यथा।

कर सुनो। हे पितृगण! प्राणमय कोषकी सहायतासे ही दैवी शक्तिके विकाशके अथवा देवताओंके आसनके उपयोगी जो आवर्त्त बनता है, उसको पीठ कहते हैं। पीठके उत्पन्न करनेके लिये जो स्वाभाविक सत्सुकौशलपूर्ण क्रिया सम्यक्-रूपसे की जाती है, उसीको योगतत्त्वज्ञ चक्र कहते हैं। हे पितृगण! इस विषयमें कोई सन्देह नहीं है। यह मानव-पिण्ड पीठ उत्पन्न करनेका सामर्थ्य रखता है और यह मानव-पिण्ड स्वाभाविक आवागमन चक्रका आश्रय ही है। पीठके भेद अनेक होनेपर भी प्रधानतः पीठ जो चार श्रेणीमें विभक्त है, उसको अभी आप लोगोंके सामने कहता हूं। प्रथम

चतुर्थं यौगिकं पीठं भगवद्विग्रहोद्भवम् ॥
अथवा यन्त्रसम्भूतं पितरो वर्त्तते यथा।
अनेकभेदसत्त्वेपि चक्रश्चास्ते चतुर्विधम्।
आवागमनचक्रादि तत्राद्यं सहजं जगुः।
द्वितीयं कीर्त्तितं चक्रं तद्वद्ब्रह्माण्डनामकम् ॥
ग्रहोपग्रहभादीनामधिकारस्थितिर्यथा।
ज्ञेयं स्वाभाविकं चक्रमेतद्द्वयमसंशयम् ॥
सगर्भस्यात्तृतीयं तद्ब्रह्मचक्रादिकं यथा।
अगर्भनामकं चक्रं चतुर्थं समुदाहृतम् ॥
मन्त्रशुद्ध्या क्रियाशुद्ध्या रहितश्चैव यद्भवेत्।
इति वः कीर्त्तितं चक्ररहस्यं परमाद्भुतम् ॥

स्थावर पीठ, यथा तीर्थादि, द्वितीय सहज पीठ, जैसा कि, नर-नारीके सङ्गम समयमें उत्पन्न होता है। तृतीय दैवी पीठ यथा—इन्द्रलोकादि और चौथा यौगिक पीठ, यथा हे पितृगण। भगवद्विग्रह और यन्त्रादिमें होता है। चक्र भी बहुत प्रकारके होनेपर भी उनकी चार श्रेणी हैं। प्रथम सहज चक्र वह कहाता है, जैसा आवागमन चक्रादि। द्वितीय ब्रह्माण्डचक्र, यथा—ग्रह उपग्रह नक्षत्रादिका अधिकार स्थान। ये दोनों निःसन्देह स्वाभाविक चक्र कहाते हैं। तृतीय चक्र सगर्भ चक्र कहाता है। यथा—ब्रह्मचक्र शक्तिचक्रादि। और चतुर्थ चक्रका नाम अगर्भ है जो मन्त्रशुद्धि और क्रियाशुद्धिसे रहित होता है। यह मैंने आप लोगोंको परम अद्भुत चक्रका रहस्य

याथार्थ्यानुष्ठितं चक्रं सगर्भं मुक्तिदं भवेत्।
अगर्भं पितरः स्तद्वन्नूनमभ्युदयप्रदम्॥
परन्त्वेवं विधायां हि दशायां चक्रसाधकैः।
भवितव्यं ध्रुवं सम्यगवश्यं मत्परायणैः॥
एतच्चक्रद्वयं जीवैः सत्सुकौशलपूर्णया।
क्रिययाऽनुष्ठितं यस्मादतोऽस्वाभाविकं जगुः॥
उत्तरोत्तरमुक्तासु सप्तसु ज्ञानभूमिषु।
क्रमारोहणकृत्यैव जायते पितरो ध्रुवम्॥
आवागमनचक्रस्याध्यात्मशुद्धिर्न संशयः।
वर्णाश्रमाख्यधर्माणां स्वाधिकारानुसारत.॥

कहा है। सगर्भ चक्र यथार्थरूपसे अनुष्ठित होनेपर मुक्तिप्रद होता है और हे पितृगण! अगर्भ चक्र यथार्थरूपसे अनुष्ठित होनेपर ही अभ्युदयप्रद होता है; परन्तु ऐसी दशा में चक्रकारी साधकोंको अवश्य ही अच्छी तरह मत्परायण होना उचित है। ये दोनों चक्र सत्सुकौशलपूर्ण क्रियासे जीवोंके द्वारा अनुष्ठित होनेके कारण अस्वाभाविक कहाते हैं। हे पितृगण! उक्त सप्त ज्ञानभूमियोंमें उत्तरोत्तर क्रमशः आरोहण करते रहनेसे ही आवागमन चक्रकी अध्यात्म-शुद्धि सम्पादित होती है इसमें सन्देह नहीं ही है। अपने अपने अधिकारानुसार वर्णाश्रम धर्मके पालन द्वाराही उस चक्रकी अधिदैव शुद्धि हुआ करती है और

जायते पालनेनाऽस्य शुद्धिः खल्वाधिदैविकी।
पितरो वो दयालब्ध्या शुद्धया शोणितशुक्रयोः॥
सहजस्यापि पीठस्य क्रमोन्नत्या निरन्तरम्।
आधिभौतिकशुद्धिर्हि नूनमस्य प्रजायते॥
चक्रमेतद्भवन्तो हि कर्त्तुमुन्नामिं सत्वरम्।
सन्ति चक्रेश्वरा नूनं स्मरणीयं सदेति वः॥
एवं सर्वेषु चक्रेषु शुद्धित्रैविध्यमुत्तमम्।
आवश्यकं भवत्येव नात्र कार्या विचारणा॥
आवागमनचक्रस्य साहाय्येनैव वोधुना।
निर्मितस्यास्य संशुद्धिं वर्णयित्वा पितृव्रजाः॥
पीठशुद्धे रहस्यं वो ब्रवीमि श्रूयतामिति।

हे पितृगण! आप लोगोंकी कृपा प्राप्त करनेसे, सहज पीठकी निरन्तर क्रमोन्नतिसे और रजवीर्यकी शुद्धिसे भी आवागमन चक्रकी आधिभौतिक शुद्धि निश्चय सम्पादित हुआ करती है। इस चक्रको शीघ्र उन्नतिशील करनेमें आप लोगही निश्चय चक्रेश्वर हैं। यह सदा आप लोगोंको स्मरण रखना चाहिये। सब चक्रोंमें इसी प्रकार उत्तम त्रिविध शुद्धिकी आवश्यकता होती है। इसमें विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। आपकी सहायतासे ही निर्मित इस आवागमन चक्रकी शुद्धिका वर्णन करके हे पितृगण! अब पीठ शुद्धिका रहस्य आप लोगोंसे कहता हूं, सुनो। नानाप्रकारके पीठोंमें

नानाविधेषु पीठेषु विधायोपासनां मम ॥
निजपिण्डस्थिते पीठे भक्ता नानाविधा यदा।
विभूतीर्मे लभन्तेऽन्ते तेजो मे सर्वथा तथा ॥
रक्षितुं पारयन्तेऽलं तदा पीठस्य जायते।
आधिभौतिकसंशुद्धिर्नात्र कश्चन संशयः ॥
यदा तु क्रमशो दैवीं शक्तिं लब्धुं ममेशते।
साधकाः पीठसंशुद्धिस्तदा स्यादाधिदैविकी ॥
तत्त्वज्ञानस्य पुण्यस्य विकाशेन यथाक्रमम्।
पीठस्याध्यात्मसंशुद्धिर्जायते च स्वधाभुजः ॥
देशकालमनोद्रव्यक्रियाशुद्धिर्हि पञ्चधा।

मेरी उपासना करके जब मेरे भक्त निज पिण्डस्थित पीठमें नाना विभूतियोंको प्राप्त करते हैं और उस दशामें वे मेरे तेजकी सर्वथा रक्षा करनेमें अच्छी तरह समर्थ होते हैं तब पीठकी आधिभौतिक शुद्धि होती है इसमें कोई सन्देह नहीं है, और क्रमशः जब साधक मेरी दैवीशक्तियोंको लाभ करनेमें समर्थ होते हैं हे पितृगण! तब पीठकी आधिदैविक शुद्धि सम्पादित होती है और पवित्र तत्त्वज्ञानके यथाक्रम विकाश द्वारा पीठकी आध्यात्मिक शुद्धि हुआ करती है। पीठ शुद्धियोंके विषयमें निःसन्देह देशशुद्धि, कालशुद्धि मनकी शुद्धि, क्रियाकी शुद्धि और द्रव्यशुद्धि, ये पांच प्रकारकी

शुद्धिर्मुख्या समाख्याता पीठशुद्धिस्त्वसंशयम् ॥
तत्रापि द्रव्यसंशुद्धिः प्राधान्यं वहते खलु ।
असौ योगोपयोगित्वाद्देहस्य जायते ध्रुवम् ॥
एवं मे ज्ञानिनो भक्ताः संशुद्धिं चक्रपीठयोः ।
समासाद्य लभन्तेऽन्ते मत्सायुज्यं न संशयः ॥
किन्त्वेवं पितरो यावज्जीवपिण्डे न संभवेत् ।
चाक्रिकी पैठिकी शुद्धिस्तावन्नैव त्रितापतः ॥
निस्तरेयुरहो जीवा कदाचिद्वै कथंचन ।
तावत्कालं च ते जीवा आवागमनचक्रके ॥
भ्रमन्तः खलु तिष्ठन्ति नास्तिकोऽप्यत्र संशयः ।
मनुष्याः पञ्चकोषाणां समासाद्यापि पूर्णताम् ॥

शुद्धियां ही मुख्य कही गई हैं। उनमेंभी द्रव्य शुद्धिही प्रधान है; क्योंकि देहके योग-उपयोगी होनेसे ही वह होती है। इस प्रकार से मेरे ज्ञानी भक्त चक्र और पीठ शुद्धिको प्राप्त करके अन्तमें निःसन्देह मत्सायुज्यको प्राप्त करलेते हैं; परन्तु हे पितृगण! जब तक जीवपिण्डमें इस प्रकार चक्रशुद्धि और पीठ शुद्धिकी सम्भावना न हो तब तक अहो त्रितापसे जीव कभीभी किसी प्रकार निस्तार नहीं हो सकते हैं और तब तक वे जीव आवागमन चक्रमें घूमते ही रहते हैं। इसमें कोई भी सन्देह नहीं हैं। मनुष्य पञ्चकोषोंकी पूर्णताको

आवागमनचक्रेऽस्मिन् विभ्रमन्तो निरन्तरम् ।
पिण्डेश्वरा भवन्तोपि भुञ्जते दुःखमुल्वणम् ॥

प्रश्नः—

धर्मकर्मयज्ञशब्दानां यथार्थतात्पर्य्यं यज्ञस्य च वैज्ञानिकं स्वरूपं श्रावयतु भवान् ।

समाधानम्—

भगवान् महाविष्णुः विष्णुगीतायां स्वयमेवमाह ।

धर्माधारा स्थिता सृष्टिः स एवास्या नियामकः ।
केवलं धर्म्ममेवैकमाश्रित्य जीवजातयः ॥

प्राप्त करके भी और पिण्डेश्वर हो जाने परभी इस आवागमन चक्रमें निरन्तर परिभ्रमण करते हुए असहनीय दुःखोंको भोगा करते हैं ।

प्रश्न—

कर्म्म धर्म्म और यज्ञ इन तीनों शब्दोंका यथार्थ तात्पर्य्य सुननेकी इच्छा है और विशेषतः यज्ञका वैज्ञानिक रहस्य कृपा करके सुनावें ।

उत्तर—

श्रीभगवान् महाविष्णुने विष्णुगीतामें निजमुखसे इस प्रकार कहा है:—

सृष्टि धर्मके आधारपर स्थित है। सृष्टिका नियामक धर्मही है और एक मात्र धर्मकोही अवलम्बन करके ये

अग्रेसराभवन्तीमा मां प्रत्येव न संशयः ।
ममानुशासनं धर्म्मं इतितत्त्वविदो विदुः ॥
जगन्नियामिका शक्तिर्धर्म्मरूपास्ति या मम ।
तया ह्यनन्तब्रह्माण्डा ह्यनन्ता लोकराशयः ॥
ऋषयः पितरो यूयं स्वस्वस्थाने स्थिताः सदा ।
रक्षन्ति सृष्टिमखिलामिति जानीत सत्तमाः ॥
धर्म्मे धारणरूपा या शक्तिरस्ति दिवौकसः ।
तयैव स्वस्वकक्षायामिमे सर्व्वे स्थिता सदा ॥
ग्रहनक्षत्रप्रमुखा लोका ब्रह्माण्डकानि च ।
तयैव पितरो यूयमृषयश्च तथासुराः ॥

जीवगण मेरी ओरही अग्रसर होते हैं। इसमें सन्देह नहीं। मेरा अनुशासन धर्म है ऐसा तत्त्वज्ञ समझते हैं। मेरी जगन्नियामिका शक्तिरूप धर्मसे अनन्त ब्रह्माण्ड समूह अनन्त लोक समूह और ऋषि देवता पितृगण अपने अपने स्थान पर सदास्थित रहकर सम्पूर्ण सृष्टिकी रक्षा करते हैं। हे श्रेष्ठ-देव गण इसको जानो। हे देवगण! मेरी धर्मकी धारिका शक्ति द्वारा ही सब ब्रह्माण्ड और सब ग्रह नक्षत्र आदि लोक समूह अपनी अपनी कक्षामें सदा स्थित रहते हैं और उसीके द्वारा ऋषि पितृ आपलोग और असुरगण भी अपनी अपनी पदमर्यादाकी रक्षा करते हुए संसारकी रक्षामें भली॰

रक्षन्तः पदमर्यादां स्वीयाँल्लोकानवन्त्यलं।
यदा स्वधर्म्माच्च्यवथ विप्लवो जायते तदा ॥
अत्यन्तं येन लोकेषु नित्यं सीदन्ति प्राणिनः।
अनन्तकोटिब्रह्माण्डयुक्तसृष्टिप्रवाहकः ॥
मत्स्थितः केवलं धर्म्ममेवैकमवलम्ब्य हि।
वर्त्तते धर्म्म एवाऽतो विश्वधारक ईरितः ॥
अनन्ता ये ग्रहाः सर्वे तथोपग्रहराशयः।
ब्रह्माण्डशब्दनिर्वाच्यास्तथैवामरपुङ्गवाः ॥
नाना वैचित्र्यसंयुक्ता उद्भिज्जस्वेदजाण्डजाः।
जरायुजा इमे नूनं भूतसङ्घाः समीरिताः ॥
सर्वानेतान् विनिर्दिष्टे नियमे परिचालयन्।
एक एवास्ति धर्म्मोऽतो जगतां स नियामकः ॥

भाँति प्रवृत्त रहते हैं। आप लोग जब स्वधर्म्मसे च्युत होते हो तभी जगत्में विप्लव उपस्थित होता है जिससे लोकोंमें प्राणिमात्र नित्य अत्यन्त क्लेश पाते हैं। मुझमें स्थित अनन्तकोटि ब्रह्माण्डयुक्त सृष्टिप्रवाह एकमात्र धर्म्मको अवलम्बन करके ही स्थित है इसी कारण धर्म्म विश्वधारक कहा गया है। हे देवश्रेष्ठगण! अनन्त ग्रह उपग्रहमय ब्रह्माण्ड और अनन्त विचित्रतापूर्ण उद्भिज्ज स्वेदज अण्डज और जरायुजरूपी चतुर्विधभूतसङ्घ इन सबको निर्दिष्ट नियम-पर चलाने वाला एक मात्र धर्म है इस कारण धर्मको

प्रकृतेर्मे वशं याता मूढा जीवगणा हि ये।
क्रमशो मां समायान्ति निश्चितं विबुधोत्तमाः॥
विशिष्टचेतना जीवास्तद्वन्मामेव चाश्रिताः।
मां प्रत्यग्रेसराः सन्तो मामेकं यान्ति वै क्रमात्॥
अतः कर्म्म द्विधा मुख्यं सहजं जैवमेव च।
तस्मात् कर्म्मविदो धीरा धर्मं कर्मेति संजगुः॥
एवं यज्ञस्तथा धर्म उभौ पर्यायवाचकौ।
कथितौ वेदनिष्णातैः शास्त्रज्ञैः शास्त्रविस्तरे॥
सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।

जगन्नियन्ता कहते हैं। हे देव श्रेष्ठगण! मेरी प्रकृतिके अधीन रहकर मूढ़ जीवगण क्रमशः मुझको निश्चित ही प्राप्त करते हैं और उसी प्रकारसे मुझे ही आश्रय करके विशिष्टचेतन जीवगण क्रमशः मेरी ओर अग्रसर होते हुए मुझको ही प्राप्त करते हैं। इसी कारण कर्म सहज और जैव रूपसे प्रधानतः दो प्रकारका कहाता है। कर्मके जानने वाले महापुरुषगण इसीसे धर्मको कर्म नामसे अभिहित करते हैं। इसी प्रकार यज्ञ और धर्म दोनों पर्याय वाचक शब्द हैं, इस बातको वेदनिष्णात शास्त्रज्ञोंने शास्त्रविस्तारमें कहा है। सृष्टिके प्रारम्भमें यज्ञके साथ ही साथ प्रजाओंको उत्पन्न करके प्रजापतिने कहा "इससे जीवगण आरा-

अनेन जीवा राध्यन्तामसावस्त्विष्टकामधुक् ॥
भावयन्तु हि वोऽनेन भवन्तो भावयन्तु तान् ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयो देवा अवाप्स्यथ ॥
इष्टान् भोगान् भवन्तो हि दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
अदत्त्वा वो भवद्दत्तान्यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥

धना करें। यह उन लोगोंका अभीष्ट प्रदान कारी होग"। हे देवगण! जीवगण इसके द्वारा आपलोगोंको सम्वर्द्धित करें और आपलोग उनको सम्वर्द्धित करें इसी प्रकार परस्पर सम्वर्द्धित होकर सब कल्याण प्राप्त करेंगे। आप लोग यज्ञसे सम्वर्द्धित होकर उनको अभिलषित भोग प्रदान करेंगे इसलिये आपके दिये भोगोंको आप लोगोंको अर्पण किये विना ही जो भोगता है वह चोर है। यज्ञका अवशिष्ट भोजन करने वाले सज्जन गण सब पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। किन्तु जो अपने लिये ही भोजन बनाते हैं वे पापिगण पापको ही भोजन करते हैं। जीवसमूह अन्नसे उत्पन्न होते हैं, अन्न वृष्टि होनेसे उत्पन्न होता है और यज्ञसे वृष्टिहोती है एवं यज्ञ

कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥
एवं प्रवर्त्तितं चक्रं नानुवर्त्तयतीह यः ।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं देवा स जीवति ॥
दैवमेवा परे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ।
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥
श्रोत्रादीनिन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति ।
शब्दादीन्विषयानन्ये इन्द्रियाग्निषु जुह्वति ॥
सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे ।

कर्म द्वारा सम्पन्न होता है। कर्मको ब्रह्म (वेद) द्वारा उत्पन्न समझो और ब्रह्म (वेद) अक्षर (ब्रह्म) से उत्पन्न है इस लिये सर्वव्यापी ब्रह्म यज्ञमें नित्य प्रतिष्ठित है। इस लोकमें जो इस प्रकार प्रवर्तित चक्रका अनुसरण नहीं करता है, हे देवगण इन्द्रियासक्त पाप जीवन वह व्यक्ति व्यर्थ जीता है। कितने योगिगण देवयज्ञकी ही उपासना करते हैं, कोई कोई यज्ञ रूप उपाय द्वारा ब्रह्मरूपी अग्निमें यज्ञको सम्पन्न करते हैं। और कोई कोई योगी संयमरूपी अग्निमें अपनी श्रवण आदि इन्द्रियोंका हवन करते हैं। और कितने योगिगण इन्द्रियरूपी अग्निमें शब्द आदि विषयोंको हवन करते हैं। कितने योगिगण ज्ञानके द्वारा प्रज्वलित आत्मसंयमरूप योगाग्निमें सम्पूर्ण इन्द्रिय कर्म और प्राण कर्मोंका हवन करते हैं। कोई कोई द्रव्य

आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते ॥
द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः ॥
अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥
अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मशाः ॥
यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्।
नायं लोकोस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यश्रिदिवौकसः ॥

दानरूपी यज्ञ, कोई तपोयज्ञ और कोई योगयज्ञके अनुष्ठाता हैं तथा नियममें दृढ़ रहने वाले यतिगण स्वाध्याय और ब्रह्मज्ञानरूपी यज्ञका अनुष्ठान करते हैं। अन्य कोई कोई अपानमें प्राण और प्राणमें अपानका हवन करते हैं और इस प्रकारसे प्राण अपानकी गतिको रुध करके प्राणायाम परायण हो जाते हैं। अन्य कोई कोई नियताहारी हो कर प्राणमें प्राणको हवन करते हैं। यज्ञके द्वारा निष्पाप, यज्ञका अवशिष्ट अमृत भोजन करने वाले, सब यज्ञवेत्ता सनातन ब्रह्मको ही प्राप्त होते हैं। हे देवता गण! जो लोग यज्ञानुष्ठानसे रहित हैं न उनका इह लोक है और न उनका परलोक ही है। ब्रह्मके जानने वालोंके मुखसे इस प्रकारसे बहु प्रकारके यज्ञोंका विस्तार हुआ है।

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे।
कर्मजान् विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यते॥
श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञोऽमृतान्धसः।
सर्वं कर्माखिलं देवा ज्ञाने परिसमाप्यते॥
अश्रद्दधाना जीवा वै धर्मस्यास्य सुधाशनाः।
अप्राप्य मां निवर्त्तन्ते मृत्यु संसारवर्त्मनि॥
त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-
मश्नन्ति दिव्यान् दिवि देवभोगान्॥

उन सबको कर्मसे उत्पन्न जानो ऐसा जान कर मनुष्य मुक्तिको प्राप्त होंगे। हे अमृतभोजी देवतागण! द्रव्यमय यज्ञसे ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है क्योंकि ज्ञानमें ही सब कर्मोंकी पूर्ण रूपसे परिसमाप्ति हुआ करती है। हे सुधाके पान करने वाले देवतागण! इस धर्ममें अश्रद्धा करने वाले जीवगण मुझको न प्राप्त करके मृत्युमय संसार मार्गमें लौट आते हैं। वेदत्रयके अनुसार कर्मकाण्ड परायण अर्थात् सकाम कर्मीगण यज्ञ द्वारा मेरा यजन करके (यज्ञ शेषरूपी) सोमपान करते हुए और निष्पाप होते हुए स्वर्ग गतिकी प्रार्थना करते हैं वे लोग पुण्यस्वरूप इन्द्रलोकमें पहुंच कर वहाँ दिव्य देवभोगसमूह

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना
गतागतं कामकामा लभन्ते ॥
अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते ॥

भवद्भिर्लोककल्याणकारिणो यावतः प्रश्नाश्चक्रिरे, तैः सहाचारस्य घनिष्टसम्बन्धत्वादुपसंहारे तस्यैवावश्यकताया विज्ञानस्य च विषये विष्णुगीतायां भगवान् श्रीमहाविष्णुर्देवान् यदुपदिदेश तदेव जगत्कल्याणार्थं प्रका-

---

भोग करते हैं वे उन विपुल स्वर्ग सुख समूहको भोग करनेके अनन्तर पुण्य क्षीण होनेपर मृत्यु लोकमें लौट आते हैं। और वेदत्रय विहित धर्मोका अवलम्बन करके भोगकी इच्छा करते हुए (आवागमन चक्रमें) आया जाया करते हैं। मैं ही सब यज्ञोंका भोक्ता और प्रभु हूं परन्तु वे लोग मेरे यथार्थ स्वरूपको नहीं जानते हैं इस कारण उनकी पुनरावृत्ति होती है।

आप लोगोंने जितने लोककल्याणकर प्रश्न किये हैं, उनसे आचारका घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसलिये उपसंहारमें आचारकी आवश्यकता और आचारके विज्ञानके विषयमें विष्णुगीतामें श्रीभगवान् महाविष्णुने निजमुखसे देवताओंके प्रति जो उपदेश

श्यते। एतेषां भगवद्‌वचनानां मङ्गलमयानि शुभ-फलानि सांसारिकाश्चिरमास्वादयन्तु।

सदाचारच्युता यूयं भवथ स्म दिवौकसः।
स्वकर्त्तव्यं स्वधर्मञ्च भवन्तो व्यस्मरञ्छुभम्॥
अत एव समाक्रामच्चित्तं वो मोहजं भयम्।
तापोऽयोग्यप्रवृत्त्युत्थोऽभावो मत्स्मृतिनाशतः॥
यूयमाचारभाजश्चेत्स्वकर्त्तव्यपरायणाः।
स्वधर्मनिरताश्चाऽपि भवितुं खलु शक्ष्यथ॥
मच्चित्ताश्चेत्तदा यूयं भयात्तापादभावतः।
विमुक्ताः सर्वकल्याणं लप्स्यध्वे मत्प्रसादतः॥

किये थे, वे उपदेश समूह जगत्‌कल्याणार्थ विवृत किये जाते हैं। इन भगवद्‌वचनोंका मङ्गलमय शुभ फल जगज्जीवगण प्राप्त करें।

तुमलोग सदाचार भ्रष्ट हो गये हो, इस कारण तुम मंगलमय निजकर्त्तव्य और स्वधर्मको भूल गये हो। इसीसे तुम्हारे चित्तपर मोहजनित भय, अयोग्य प्रवृत्ति जनित ताप और मेरे विस्मरणजनित अभाव इन सबोंने अधिकार कर लिया है। यदि तुम आचारवान् होनेसे कर्तव्यपरायण स्वधर्मनिरत और मद्गतचित्त हो सकोगे, तब भय और ताप मुक्त होकर सब प्रकारके अभावको दूर करते हुए मेरी कृपासे यावन्मंगल लाभ

रक्षन्तः पदमर्यादां स्वीयाँल्लोकानवन्त्यलं।
यदा स्वधर्म्माच्च्यवथ विप्लवो जायते तदा॥
अत्यन्तं येन लोकेषु नित्यं सीदन्ति प्राणिनः।
अनन्तकोटिब्रह्माण्डयुक्तसृष्टिप्रवाहकः॥
मत्स्थितः केवलं धर्म्ममेवैकमवलम्ब्य हि।
वर्त्तते धर्म्म एवाऽतो विश्वधारक ईरितः॥
अनन्ता ये ग्रहाः सर्वे तथोपग्रहराशयः।
ब्रह्माण्डशब्दनिर्वाच्यास्तथैवामरपुङ्गवाः॥
नाना वैचित्र्यसंयुक्ता उद्भिज्जस्वेदजाण्डजाः।
जरायुजा इमे नूनं भूतसङ्घाः समीरिताः॥
सर्वानेतान् विनिर्दिष्टे नियमे परिचालयन्।
एक एवास्ति धर्म्मोऽतो जगतां स नियामकः॥

भाँति प्रवृत्त रहते हैं। आप लोग जब स्वधर्म्मसे च्युत होते ही तभी जगत्में विप्लव उपस्थित होता है जिससे लोकोंमें प्राणिमात्र नित्य अत्यन्त क्लेश पाते हैं। मुझमें स्थित अनन्तकोटि ब्रह्माण्डयुक्त सृष्टिप्रवाह एकमात्र धर्म्मको अवलम्बन करके ही स्थित है इसी कारण धर्म्म विश्वधारक कहा गया है। हे देवश्रेष्ठगण! अनन्त ग्रह उपग्रहमय ब्रह्माण्ड और अनन्त विचित्रतापूर्ण उद्भिज्ज स्वेदज अण्डज और जरायुजरूपी चतुर्विधभूतसङ्घ इन सबको निर्दिष्ट नियम पर चलाने वाला एक मात्र धर्म है इस कारण धर्मको

प्रकृतेर्मे वशं याता मूढा जीवगणा हि ये।
क्रमशो मां समायान्ति निश्चितं विबुधोत्तमाः॥
विशिष्टचेतना जीवास्तद्वन्मामेव चाश्रिताः।
मां प्रत्यग्रसराः सन्तो मामेकं यान्ति वै क्रमात्॥
अतः कर्म्म द्विधा मुख्यं सहजं जैवमेव च।
तस्मात् कर्मविदो धीरा धर्मं कर्मेति संजगुः॥
एवं यज्ञस्तथा धर्म उभौ पर्यायवाचकौ।
कथितौ वेदनिष्णातैः शास्त्रज्ञैः शास्त्रविस्तरे॥
सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।

जगन्नियन्ता कहते हैं। हे देव श्रेष्ठगण! मेरी प्रकृतिके अधीन रहकर मूढ़ जीवगण क्रमशः मुझको निश्चित ही प्राप्त करते हैं और उसी प्रकारसे मुझे ही आश्रय करके विशिष्टचेतन जीवगण क्रमशः मेरी ओर अग्रसर होते हुए मुझको ही प्राप्त करते हैं। इसी कारण कर्म सहज और जैव रूपसे प्रधानतः दो प्रकारका कहाता है। कर्मके जानने वाले महापुरुषगण इसीसे धर्मको कर्म नामसे अभिहित करते हैं। इसी प्रकार यज्ञ और धर्म दोनों पर्याय वाचक शब्द हैं, इस बातको वेदनिष्णात शास्त्रज्ञोंने शास्त्रविस्तारमें कहा है। सृष्टिके प्रारम्भमें यज्ञके साथ ही साथ प्रजाओंको उत्पन्न करके प्रजापतिने कहा "इससे जीवगण आरा-

अनेन जीवा राध्यन्तामसावस्त्विष्टकामधुक् ॥
भावयन्तु हि वोऽनेन भवन्तो भावयन्तु तान्।
परस्परं भावयन्तः श्रेयो देवा अवाप्स्यथ ॥
इष्टान् भोगान् भवन्तो हि दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
अदत्त्वा वो भवद्दत्तान्यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥

धना करें। यह उन लोगोंका अभीष्ट प्रदान कारी हो"। हे देवगण! जीवगण इसके द्वारा आपलोगोंको सम्वर्द्धित करें और आपलोग उनको सम्वर्द्धित करें इसी प्रकार परस्पर सम्वर्द्धित होकर सब कल्याण प्राप्त करेंगे। आप लोग यज्ञसे सम्वर्द्धित होकर उनको अभिलषित भोग प्रदान करेंगे इसः लिये आपके दिये भोगोंको आप लोगोंको अर्पण किये विना ही जो भोगता है वह चोर है। यज्ञका अवशिष्ट भोजन करने वाले सज्जन गण सब पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। किन्तु, जो अपने लिये ही भोजन बनाते हैं वे पापिगण पापको ही भोजन करते हैं। जीवसमूह अन्नसे उत्पन्न होते हैं, अन्न वृष्टि होनेसे उत्पन्न होता है और यज्ञसे वृष्टिहोती है एवं यज्ञ

कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥
एवं प्रवर्त्तितं चक्रं नानुवर्त्तयतीह यः ।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं देवा स जीवति ॥
दैवमेवा परे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ।
ब्रह्मान्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥
श्रोत्रादीनिन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति ।
शब्दादीन्विषयानन्ये इन्द्रियाग्निषु जुह्वति ॥
सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे ।

कर्म द्वारा उत्पन्न होता है। कर्मको ब्रह्म (वेद) द्वारा उत्पन्न समझो और ब्रह्म (वेद) अक्षर (ब्रह्म) से उत्पन्न है इस लिये सर्वव्यापी ब्रह्म यज्ञमें नित्य प्रतिष्ठित है। इस लोकमें जो इस प्रकार प्रवर्तित चक्रका अनुसरण नहीं करता है, हे देवगण इन्द्रियासक्त पाप जीवन वह व्यक्ति व्यर्थ जीता है। कितने योगिगण देवयज्ञकी ही उपासना करते हैं, कोई कोई यज्ञ रूप उपाय द्वारा ब्रह्मरूपी अग्निमें यज्ञको सम्पन्न करते हैं। और कोई कोई योगी संयमरूपी अग्निमें अपनी श्रवण आदि इन्द्रियोंका हवन करते हैं। और कितने योगिगण इन्द्रियरूपी अग्निमें शब्द आदि विषयोंको हवन करते हैं। कितने योगिगण ज्ञानके द्वारा प्रज्वलित आत्मसंयमरूप योगाग्निमें सम्पूर्ण इन्द्रिय कर्म और प्राण कर्मोंका हवन करते हैं। कोई कोई द्रव्य-

आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते ॥
द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे ।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः ॥
अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे ।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥
अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति ।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मशाः ॥
यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यस्त्रिदिवौकसः ॥

दानरूपी यज्ञ, कोई तपोयज्ञ और कोई योगयज्ञके अनुष्ठाता हैं तथा नियममें दृढ़ रहने वाले यतिगण स्वाध्याय और ब्रह्मज्ञान-रूपी यज्ञका अनुष्ठान करते हैं। अन्य कोई कोई अपानमें प्राण और प्राणमें अपानका हवन करते हैं और इस प्रकारसे प्राण अपानकी गतिको रुद्ध करके प्राणायाम परायण हो जाते हैं। अन्य कोई कोई नियताहारी हो कर प्राणमें प्राणको हवन करते हैं। यज्ञके द्वारा निष्पाप, यज्ञका अवशिष्ट अमृत भोजन करने वाले, सब यज्ञवेत्ता सनातन ब्रह्मको ही प्राप्त होते हैं। हे देवता गण! जो लोग यज्ञानुष्ठानसे रहित हैं न उनका इह लोक है और न उनका परलोक ही है। ब्रह्मके जानने वालों-के मुखसे इस प्रकारसे बहु प्रकारके यज्ञोंका विस्तार हुआ है।

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ।
कर्मजान् विद्ध तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यते ॥
श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञोऽमृतान्धसः ।
सर्वं कर्माखिलं देवा ज्ञाने परिसमाप्यते ॥
अश्रद्दधाना जीवा वै धर्मस्यास्य सुधाशनाः ।
अप्राप्य मां निवर्त्तन्ते मृत्यु संसारवर्त्मनि ॥
त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापाः
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते ।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-
मश्नन्ति दिव्यान् दिवि देवभोगान् ॥

उन सबको कर्मसे उत्पन्न जानो ऐसा ज्ञान कर मनुष्य मुक्तिको प्राप्त होंगे । हे अमृतभोजी देवतागण ! द्रव्यमय यज्ञसे ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है क्योंकि ज्ञानमें ही सब कर्मोंकी पूर्ण रूपसे परिसमाप्ति हुआ करती है । हे सुधाके पान करने वाले देवतागण ! इस धर्ममें अश्रद्धा करने वाले जीवगण मुझको न प्राप्त करके मृत्युमय संसार मार्गमें लौट आते हैं । वेदत्रयके अनुसार कर्मकाण्ड परायण अर्थात् सकाम कर्मीगण यज्ञ द्वारा मेरा यजन करके (यज्ञ शेषरूपी) सोमपान करते हुए और निष्पाप होते हुए स्वर्ग गतिकी प्रार्थना करते हैं वे लोग पुण्यस्वरूप इन्द्रलोकमें पहुंच कर वहाँ दिव्य देवभोगसमूह

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना
गतागतं कामकामा लभन्ते ॥
अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च ।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते ॥

भवद्भिर्लोककल्याणकारिणो यावतः प्रश्नाश्चक्रिरे; तैः सहाचारस्य घनिष्टसम्बन्धत्वादुपसंहारे तस्यैवावश्यकताया विज्ञानस्य च विषये विष्णुगीतायां भगवान् श्रीमहाविष्णुर्देवान् यदुपदिदेश, तदेव जगत्कल्याणार्थं प्रका-

---

भोग करते हैं वे उन विपुल स्वर्ग सुख समूहको भोग करनेके अनन्तर पुण्य क्षीण होनेपर मृत्यु लोकमें लौट आते हैं। और वेदत्रय विहित धर्मोंका अवलम्बन करके भोगकी इच्छा करते हुए (आवागमन चक्रमें) आया जाया करते हैं। मैं ही सब यज्ञोंका भोक्ता और प्रभु हूं परन्तु वे लोग मेरे यथार्थ स्वरूपको नहीं जानते हैं इस कारण उनकी पुनरावृत्ति होती है।

आप लोगोंने जितने लोककल्याणकर प्रश्न किये हैं, उनसे आचारका घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसलिये उपसंहारमें आचारकी आवश्यकता और आचारके विज्ञानके विषयमें विष्णुगीतामें श्रीभगवान् महाविष्णुने निजमुखसे देवताओंके प्रति जो उपदेश

श्यते । एतेषां भगवद्वचनानां मङ्गलमयानि शुभफलानि सांसारिकाश्चिरमास्वादयन्तु ।

सदाचारच्युता यूयं भवथ स्म दिवौकसः ।
स्वकर्त्तव्यं स्वधर्मञ्च भवन्तो व्यस्मरञ्छुभम् ॥
अत एव समाक्रामच्चित्तं वो मोहजं भयम् ।
तापोऽयोग्यप्रवृत्त्युत्थोऽभावो मत्स्मृतिनाशतः ॥
यूयमाचारभाजश्चेत्स्वकर्त्तव्यपरायणाः ।
स्वधर्मनिरताश्चाऽपि भवितुं खलु शक्ष्यथ ॥
मच्चित्ताश्चेत्तदा यूयं भयात्तापादभावतः ।
विमुक्ताः सर्वकल्याणं लप्स्यध्वे मत्प्रसादतः ॥

किये थे, वे उपदेश समूह जगत्कल्याणार्थ विवृत किये जाते हैं। इन भगवद्वचनोंका मङ्गलमय शुभ फल जगज्जीवगण प्राप्त करें।

तुमलोग सदाचार भ्रष्ट हो गये हो, इस कारण तुम मंगलमय निजकर्त्तव्य और स्वधर्मको भूल गये हो। इसीसे तुम्हारे चित्तपर मोहजनित भय, अयोग्य प्रवृत्ति जनित ताप और मेरे विस्मरणजनित अभाव इन सबोंने अधिकार कर लिया है। यदि तुम आचारवान् होनेसे कर्तव्यपरायण स्वधर्मनिरत और मद्गतचित्त हो सकोगे, तब भय और ताप मुक्त होकर सब प्रकारके अभावको दूर करते हुए मेरी कृपासे यावन्मंगल लाभ

आचारः सर्वकल्याणमूलं नूनं दिवौकसः!
शक्यन्त्याचारवन्तो हि प्राप्तुं कल्याणसम्पदः ॥
आचारमूला जातिः स्यादाचारः शास्त्रमूलकः।
वेदवाक्यं शास्त्रमूलं वेदः साधकमूलकः ॥
साधकश्च क्रियामूलः क्रियाऽपि फलमूलिका।
फलमूलं सुखं देवाः! सुखमानन्दमूलकम् ॥
आनन्दो ज्ञानमूलस्तु ज्ञानं वै ज्ञेयमूलकम्।
तत्त्वमूलं ज्ञेयमात्रं तत्त्वं हि ब्रह्ममूलकम् ॥
ब्रह्मज्ञानं त्वैक्यमूलमैक्यं स्यात् सर्वमूलकम्।
ऐक्यं तद्धि सुपर्वाणः भावातीतं सुनिश्चितम् ॥

करोगे। हे देवगण! आचार ही सब कल्याणोंका मूल है, आचारवान् ही सब कुछ प्राप्त कर सकते हैं। जाति आचारमूलक होती है, आचार शास्त्रमूलक होता है, शास्त्रका मूल वेदवाक्य है, वेदका मूल साधक है, साधककी मूल क्रिया है, क्रियाका मूल फल है, हे देवगण! फलका मूल सुख है, सुखका मूल आनन्द है, आनन्दका मूल ज्ञान है, ज्ञानका मूल ज्ञेय है, सकल ज्ञेयोंका मूल तत्त्व है, तत्त्वका मूल ब्रह्म है, ब्रह्मज्ञानका मूल ऐक्य है और ऐक्य सबका मूल है। हे देवगण! वही ऐक्य भावातीत है यह निश्चित है। यह

भावातीतमिदं सर्वं प्रकाश्ये भावमात्रकम् ।
नास्त्यत्र संशयः कोऽपि सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥

इति श्री ७दशमहाविद्यासिद्ध ७सर्व्वानन्ददेव (सर्वविद्या)
कुलोत्पन्न महामहोपाध्याय महामहाध्यापक
श्रीअन्नदाचरण तर्कचूड़ामणि शर्म्म-
विरचिता धर्म्मकर्म्मदिपिका
समाप्ता ।

सकल संसार प्रकाश-रूपसे केवल भावमय है परन्तु वस्तुतः भावातीत है इसमें कोई भी सन्देह नहीं है । मैं सत्य सत्य कहता हूं ।

इस प्रकार ७दशमहाविद्यासिद्ध ७सर्व्वानन्ददेव (सर्व्वविद्या)
कुलोत्पन्न महामहोपाध्याय महामहाध्यापक
श्रीअन्नदाचरण तर्कचूड़ामणि शर्म्मा
विरचित धर्म्मकर्म्मदिपिका
समाप्त हुई ।
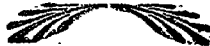
वाराणसीविद्यापरिषद् ।

———०:*:०———

श्रीभारतधर्ममहामण्डलका एक धार्मिक विश्वविद्यालय स्थापन करनेका उद्देश्य प्रथमसे ही था। उसी उद्देश्यकी पूर्तिके लिये महामण्डलके सञ्चालकोंने यह परिषद् स्थापन की है, इसके द्वारा निम्नलिखित परीक्षाएँ ली जायँगी, जिनके पाठ्य ग्रंथ भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड काशीके निगमागम पुस्तक-भण्डार द्वारा प्राप्त हो सकते हैं। परीक्षा प्रतिवर्ष चैत्र मासमें होगी। (१) उपाध्याय परीक्षा। (२) महोपाध्याय परीक्षा। पौरोहित्य परीक्षाके दो नाम रक्खे गये हैं, यथा—(३) श्रौतकर्म्म विशारद परीक्षा और (४) स्मार्तकर्म्मविशारद परीक्षा। गुरु और आचार्य्यसम्बन्धीय परीक्षा, यथा—(५) धर्माचार्य्य परीक्षा और (६) उपदेशक परीक्षा। हिन्दीभाषा इस समय भारतवर्षकी राष्ट्रभाषा समझी जाती है अतः उसकी उन्नतिके लिये जो परीक्षा होगी उसका नाम (७) राष्ट्रभाषा विशारद परीक्षा है। इसके सिवाय (८) स्कूलके छात्रोंके लिये एक परीक्षा (९) कालेजके छात्रोंके लिये एक परीक्षा और एक (१०) धर्म्मप्रवेशिका परीक्षा होगी।

मन्त्री, वाराणसी विद्या परिषद्

महामण्डल भवन,

जगत्गञ्ज, काशी।

भारतधर्मसिंडिकेट लिमिटेड

का

भारतधर्म्म प्रेस।

—:o✽o:—

मनुष्योंकी सर्वाङ्गीण उन्नति लिखने पढ़नेसे होती है। वर्तमान समयमें शिक्षा-वृद्धिके जितने साधन उपलब्ध हैं, उनमें 'प्रेस' सबसे बढ़कर है। सनातनधर्मके सिद्धान्तोंका और वर्णाश्रमसंघके उद्देश्योंका प्रचार करनेके लिये भी इस साधनका अवलम्बन करना उचित जानकर उक्त कम्पनीने भारतधर्म्म नामक प्रेस खोल दिया है। इसमें हिन्दी, अंग्रेजी और बंगलाका सब प्रकारका काम उत्तमतासे होता है। पुस्तक, पत्रिकाएँ, हैंडबिल, लेटरपेपर, वालपोस्टर्स, चेक, बिल, हुण्डी, रसीदें, रजिस्टर, फार्म आदि छपवाकर इस प्रेसकी छपाईकी सुन्दरताका अनुभव कीजिये। इसको एक आदर्श जातीय प्रेस बनानेका आयोजन हो रहा है।

मैनेजर:—

भारतधर्म्म प्रेस,

भारतधर्मसिंडिकेट लिमिटेड भवन,

जगत्गञ्ज स्टेशनरोड, बनारस (शहर)

भारतधर्मसिंडिकेट लिमिटेड

का

शास्त्रप्रकाशन विभाग।

—:०*०:—

इस विभागसे सब प्रकारकी धार्मिक और जातीय पुस्तकें प्रकाशित होंगी और जो योग्य ग्रन्थरचयिता धनाभावसे ग्रन्थ प्रकाशित नहीं कर सकेंगे, उनकी भी पुस्तकें लेकर प्रकाशित की जायँगी।

सेक्रेटरी:—भारतधर्म्मसिण्डिकेट लिमिटेड
सिण्डिकेट भवन, स्टेशन रोड, जगत्गंज, बनारस (शहर)

भारतधर्मसिंडिकेट लिमिटेड

का

बङ्क विभाग।

—:*:—

यह विभाग सिण्डिकेटके हिस्सेदार, वर्णाश्रमसंघके प्रतिनिधि तथा मध्यवृत्तिके सद्गृहस्थोंको धनकी आवश्यकता होनेपर सहायता देनेके विचारसे खोला गया है।

सेक्रेटरी:—
भारतधर्म्मसिण्डिकेट लिमिटेड,
सिण्डकेट भवन, स्टेशन रोड,
जगत्गंज, बनारस (शहर)

भारतधर्मसिंडिकेट लिमिटेड।

का

एजेन्सी विभाग।

—:०#०:—

यह विभाग देशी शिल्पके प्रचार और स्वदेशी वाणिज्यको मदद देनेके लिये खोला गया है।

सेक्रेटरी—भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड,

सिण्डिकेट भवन, स्टेशन रोड, जगत्‌गंज, बनारस (शहर)

भारतधर्मसिंडिकेट लिमिटेड।

का

इन्‌फर्मेशन बोरो विभाग।

—:०#०:—

स्वदेशोन्नति तथा वाणिज्यादिके विषयमें जो कोई कुछ सम्वाद जानना चाहेंगे सो इस विभागके द्वारा पहुँचाया जायगा। जिससे देशके शिल्प वाणिज्य और आर्थिक उन्नतिमें सहायता पहुँच सके।

सेक्रेटरी

भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड,

सिण्डिकेट भवन, स्टेशन रोड,

जगत्‌गंज, बनारस (शहर)

वर्णाश्रमसङ्घ ।

—:०*०:—

भारतवर्षकी वर्तमान राजनैतिक परिस्थितिके विचारसे स्वधर्माभिमान, स्वजातीय अभिमान और स्वत्वरक्षापूर्वक वर्णाश्रमधर्मावलम्बी हिन्दूजातिका राजनैतिक अभ्युदय करना इस सङ्घका उद्देश्य है। भारतवर्षके प्रति नगर तथा प्रति ग्राममें इस स्वजातीय सङ्घकी सभ्यसंख्या वृद्धि करके भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तमें एक एक प्रान्तीय केन्द्र स्थापन करनेका विचार है। उद्देश्यपत्रपर हस्ताक्षर करके वर्णाश्रमधर्म्म माननेवाले स्त्री-पुरुष मात्र ही इसके सभ्य हो सकते हैं। अभी संघके सभ्योंसे संघका फार्म भरवाया जायगा और उनके पास वर्णाश्रमसंघ नामक पुस्तिका पहुंचाई जायगी। संघके जो मुखपत्र हिन्दी और अंग्रेजीमें भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड, बनारससे निकलते हैं, उनमेंसे एकका लेना संघके प्रतिनिधियोंके लिये आवश्यक होगा।

मंत्री—वर्णाश्रमसंघ—

भारतधर्मसिण्डिकेट लिमिटेड,

सिण्डिकेट भवन, स्टेशन रोड, जगतगंज, बनारस (शहर)

---

(५) सर्वनाम सूत्र (वृत्ति, पञ्जिका कलापचन्द्र परिशिष्ट, गोपीनाथ) कौमुदी टीका सहित ।≈)

(६) परिशिष्ट धातुसूत्र (वृत्ति गोपीनाथ) कौमुदी टीका सहित ॥)

(७) परिशिष्ट नद्याद्यन्तकारक (सूत्र वृत्ति गोपीनाथ) कौमुदी टीका सहित १)

(८) परिशिष्ट (नाम्नां कारिका, गोपीनाथ) कौमुदी टीका सहित ।≈)

(९) धातुसंग्रह (प्रथम भाग) ≈)

(१०) ,, ,, (द्वितीय भाग) ।)

(११) व्युत्पत्तिकल्पतरु =)

(१२) काव्यचन्द्रिका—सरल टीका सहित (अलंकार) =)॥

काव्य—

(१३) श्रीरामाभ्युदय (महाकाव्य) २)

(१४) महाप्रस्थान (,,) २)

(१५) कुसुमाञ्जलि ≈)

(१६) ऋतुचित्र ।=)

शब्द खण्ड—

(१७) नाम प्रत्यय विवेक ॥)

(१८) सुप्‌रहस्य ॥।)

(१९) धातु प्रत्यय विवेक ॥)

दर्शन—

(२०) सांख्य रहस्य। ॥।)

शारदाचरण भट्टाचार्य—

ग्राम—सोमपाड़ा, पो० खिलपाड़ा, जि० नोयाखाली।

(बंगाल)

सनातन धर्मकी पुस्तकें।

धर्मकल्पद्रुम।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

यह हिन्दूधर्मका अद्वितीय और परमावश्यक ग्रंथ है। हिन्दू जातिकी पुनरुन्नतिके लिये जिन जिन आवश्यकीय विषयोंकी जरूरत है, उनमेंसे सबसे बड़ा भारी जरूरत एक ऐसे धर्मग्रन्थकी थी कि, जिसके अध्ययन अध्यापनके द्वारा सनातनधर्मका रहस्य और उसका विस्तृत स्वरूप तथा उसके अङ्ग उपांगोंका यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो सके और साथ ही साथ वेदों और सब शास्त्रोंका आशय तथा वेदों और सब शास्त्रोंमें कहे हुए विज्ञानोंका यथाक्रम स्वरूप जिज्ञासुओंको भलीभांति विदित हो सके। इसी गुरुतर अभावको दूर करनेके लिये भारतके प्रसिद्ध धर्मवक्ता और श्रीभारतधर्म महामण्डलस्थ उपदेशक महाविद्यालयके दर्शनशास्त्रके अध्यापक श्रीमान् स्वामी दयानन्दजी महाराजने इस ग्रन्थका प्रणयन करना प्रारम्भ किया है। इसमें वर्तमान समयके आलोच्य सभी विषय विस्तृतरूपसे दिये जायँगे। अबतक इसके छः खण्डोंमें जो अध्याय प्रकाशित हुए हैं, वे ये हैं:—धर्म्म, दानधर्म, तपोधर्म, कर्म्मयज्ञ, उपासनायज्ञ, ज्ञानयज्ञ, महायज्ञ, वेद, वेदांग, दर्शनशास्त्र (वेदोपांग) स्मृतिशास्त्र, पुराणशास्त्र, तन्त्र..स्त्र उपवेद, ऋषि,और पुस्तक, साधारण धर्म्म और विशेष ध..., वर्णधर्म्म, आश्रमधर्म्म, नारीधर्म्म (पुरुषधर्मसे नारीधर्मकी विशेषता), आर्य्यजाति

समाज और नेता, राजा और प्रजाधर्म्म, प्रवृत्तिधर्म्म और निवृत्तिधर्म्म, आपद्धर्म्म, भक्ति और योग, मन्त्रयोग, हठयोग, लययोग, राजयोग, गुरु और दीक्षा, वैराग्य और साधन, आत्मतत्त्व, जीवतत्त्व, प्राण और पीठतत्त्व, सृष्टिस्थितिप्रलय तत्त्व, ऋषि, देवता और पितृतत्त्व, अवतारतत्त्व, मायातत्त्व, त्रिगुणतत्त्व, त्रिभावतत्त्व, कर्मतत्त्व मुक्तितत्त्व, पुरुषार्थ और वर्णाश्रमसमीक्षा, दर्शनसमीक्षा, धर्मसम्प्रदायसमीक्षा, धर्म-पन्थसमीक्षा और धर्ममतसमीक्षा। इस ग्रंथसे आजकलके अशास्त्रीय और विज्ञानरहित धर्मग्रन्थों और धर्मप्रचारकों द्वारा जो हानि हो रही है, वह मद दूर होकर यथार्थरूपसे सनातन वैदिक धर्मका प्रचार होगा। इस ग्रंथ रत्नमें साम्प्रदायिक पक्षपातका लेशमात्र भी नहीं है और निष्पक्षरूपसे सब विषय प्रतिपादित किये गये हैं, जिससे सकल प्रकारके अधिकारी कल्याण प्राप्त कर सकें। इसमें और भी एक विशेषता यह है कि, हिन्दुशास्त्रके सभी विज्ञान शास्त्रीय प्रमाणों और युक्तियोंके सिवाय, आजकलकी पदार्थ विद्या (Science) के द्वारा भी प्रतिपादित किये गये हैं, जिससे आजकलके नवशिक्षित पुरुष भी इससे लाभ उठा सकें। इसके छः खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। प्रथम खण्डका मूल्य २), द्वितीयका १॥), तृतीयका २), चतुर्थका २), पंचमका २) और षष्ठका १॥) है। इसके प्रथम दो खण्ड बढ़िया कागज पर भी छापे गये हैं और दोनों ही एक बहुत सुन्दर जिल्दमें बाँधे गये हैं। मूल्य ५) है। सातवाँ खण्ड यन्त्रस्थ है।

प्रवीण दृष्टिमें नवीन भारत।

श्रीस्वामी दयानन्द सम्पादित।

इस ग्रंथमें आर्यजातिका आदिका वास स्थान, उन्नतिका

आदर्श निरूपण, शिक्षादर्श, आर्यजीवन, वर्णधर्म आश्रम-धर्म आदि विषय वैज्ञानिक युक्ति तथा शास्त्रीय प्रमाणोंके साथ वर्णित किये गये हैं। यह ग्रन्थ धर्मशिक्षाके अर्थ बी. ए. क्लासका पाठ्य है। मूल्य २)।

नवीन दृष्टिमें प्रवीण भारत।

श्रीस्वामी दयानन्द सम्पादित।

भारतका प्राचीन गौरव और आर्यजातिका महत्त्व जाननेके लिये यह एक ही पुस्तक है। इसका द्वितीय संस्करण परिवर्द्धित और सुन्दर होकर छप चुका है। यह ग्रन्थ भी बी० ए० क्लासका पाठ्य है। मूल्य १)

साधनचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

इसमें मन्त्रयोग, हठयोग, लययोग और राजयोग इन चारों योगोंका संक्षिप्तमें अति सुन्दर वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ प्रथम वार्षिक एफ. ए. क्लासका पाठ्य है। मूल्य १॥)

शास्त्रचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

यह ग्रन्थ हिन्दुशास्त्रोंकी बातें दर्पणवत् प्रकाशित करनेवाला है। यह ग्रन्थ द्वितीय वार्षिक एफ. ए. क्लासका पाठ्य है। [यन्त्रस्थ]

धर्मचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

एन्ट्रेंस क्लासके बालकोंके पाठनोपयोगी उत्तम धर्मपुस्तक है। इसमें सनातन धर्मका उदार सार्वभौम स्वरूपवर्णन,

यज्ञ, दान, तप आदि धर्माङ्गोंका विस्तृत वर्णन, वर्णधर्म, आश्रमधर्म, नारीधर्म, आर्यधर्म, राजधर्म तथा प्रजाधर्मके विषयमें बहुत कुछ लिखा गया है। कर्मविज्ञान, सन्ध्या, पञ्चमहायज्ञ आदि नित्यकर्मोंका वर्णन, षोडश संस्कारोंके पृथक् पृथक् वर्णन और संस्कारशुद्धि तथा क्रियाशुद्धि द्वारा मोक्षका यथार्थ मार्ग निर्देश किया गया है। इस ग्रंथके पाठसे छात्रगण धर्मतत्त्व अवश्य ही अच्छी तरहसे जान सकेंगे। मूल्य १)

आर्य गौरव।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

आर्यजातिका महत्त्व जाननेके लिये यह एक ही पुस्तक है। यह ग्रन्थ स्कूलकी ९ वीं तथा १० वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ॥) है।

आचारचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

यह भी स्कूलपाठ्य सदाचार सम्बन्धीय धर्मपुस्तक है। इसमें प्रातःकालसे लेकर रात्रिमें निद्राके पहले तक क्या क्या सदाचार किस लिये प्रत्येक हिन्दुसन्तानको अवश्य ही पालने चाहिये, इसका रहस्य उत्तम रीतिसे बताया गया है और आधुनिक समयके विचारसे प्रत्येक आचारपालनका वैज्ञानिक कारण भी दिखाया गया है। यह ग्रन्थ बालकोंके लिये अवश्य ही पाठ करने योग्य है। यह स्कूलकी ८ वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ॥)

नीतिचन्द्रिका।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

मानवीय जीवनका उन्नत होना नीतिशिक्षापर ही अव-

अङ्कित होता है। कोमलमति बालकोंके हृदयोंपर नीतितत्त्व अङ्कित करनेके उद्देश्यसे यह पुस्तिका लिखी गई है। इसमें नीतिकी सब बातें ऐसी सरलतासे समझाई गई हैं कि, इस एकके ही पाठसे नीतिशास्त्रका ज्ञान हो सकता है। यह स्कूल-की ७ वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ॥)

चरित्रचन्द्रिका।

सम्पादक पं० गोविन्दशास्त्री दुगवेकर।

इस ग्रन्थमें पौराणिक ऐतिहासिक और आधुनिक महापुरुषोंके सुन्दर मनोहर विचित्र चरित्र वर्णित हैं। यह ग्रन्थ स्कूलकी ६ ठीं कक्षाका पाठ्य है। प्रथम भागका मूल्य १)

धर्मप्रश्नोत्तरी।

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित।

सनातनधर्मके प्रायः सब सिद्धान्त अति संक्षिप्तरूपसे इस पुस्तिकामें लिखे गये हैं। प्रश्नोत्तरीकी प्रणाली ऐसी सुन्दर रक्खी गई है कि, छोटे बच्चे भी धर्मतत्त्वोंको भली-भांति हृदयङ्गम कर सकेंगे। भाषा भी अति सरल है। यह ग्रन्थ स्कूलकी ४ थी कक्षाका पाठ्य है। कागज और छपाई बढ़ियाँ होनेपर भी मूल्य केवल ।) मात्र है।

परलोक रहस्य।

श्रीमान् स्वामी दयानन्द विरचित।

मनुष्य मर कर कहाँ जाता है, उसकी क्या गति होती है, इस विषय पर वैज्ञानिक युक्ति तथा शास्त्रीय प्रमाणोंके साथ विस्तृतरूपसे वर्णन है। मूल्य ।)

चतुर्दशलोक रहस्य

श्रीमान् स्वामी दयानन्द विरचित ।

स्वर्ग और नरक कहाँ और क्या वस्तु हैं, इनके साथ हमारे इस मृत्युलोक का क्या सम्बन्ध है इत्यादि विषय शास्त्र और युक्तिके साथ वर्णित किये गये हैं। आजकल स्वर्ग नरक आदि लोकोंके विषयमें बहुत संशय फैल रहा है। श्रीमान् स्वामीजी महाराजने अपनी स्वाभाविक सरल युक्तियोंके द्वारा चतुर्दश लोकों का रहस्य वर्णन करते हुए उस सन्देह का अच्छा समाधान किया है। मूल्य ।)

सती-चरित्र-चन्द्रिका ।

श्रीमान् पं० गोविन्द शास्त्री दुगवेकर सम्पादित ।

इस पुस्तकमें सीता, सावित्री, गार्गी, मैत्रेयी आदि ४४ सती स्त्रियोंके जीवन चरित्र लिखे गये हैं। मूल्य २)

नित्य कर्म चन्द्रिका ।

इस ग्रन्थमें प्रातःकालसे लेकर रात्रि पर्यन्त हिन्दुमात्रके अनुष्ठान करने योग्य नित्य कर्म वैदिक तांत्रिक मन्त्रोंके साथ भली भांति वर्णित किये गये हैं। मूल्य ।)

धर्मसोपान ।

यह धर्मशिक्षा विषयक बड़ी उत्तम पुस्तक है। बालकोंको इससे धर्मका साधारण ज्ञान भलीभांति हो जाता है। यह पुस्तक क्या बालक बालिका, क्या वृद्ध स्त्री पुरुष, सबके लिये बहुत ही उपकारी है। धर्मशिक्षा पानेकी इच्छा करनेवाले सज्जन अवश्य इस पुस्तकको मंगावें। यह स्कूलकी ५ वीं कक्षाका पाठ्य है। मूल्य ।) आना।

सदाचारसोपान।

यह पुस्तक कोमलमति बालक बालिकाओंकी धर्मशिक्षाके लिये प्रथम पुस्तक है। यह स्कूलकी तीसरी कक्षाका पाठ्य है। मूल्य -) एक आना।

कन्याशिक्षासोपान।

कोमलमति कन्याओंको धर्मशिक्षा देनेके लिये यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है। मूल्य -)

ब्रह्मचर्यसोपान।

ब्रह्मचर्य्य व्रत की शिक्षाके लिये यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी है। सब ब्रह्मचारी आश्रम, पाठशाला और स्कूलोंमें इस ग्रंथकी पढ़ाई होनी चाहिये। मूल्य।) चार आना।

राजशिक्षा सोपान।

राजा महाराजा और उनके कुमारोंको धार्मिक शिक्षा देनेके लिये यह ग्रंथ बनाया गया है; परन्तु सर्वसाधारणकी धर्म्म-शिक्षाके लिये भी यह ग्रंथ बहुत ही उपयोगी है, इसमें सनातन धर्मके अंग और उसके तत्व अच्छी तरह बताये गये हैं। मूल्य ≡) तीन आना।

साधनसोपान।

यह पुस्तक उपासना और साधनशैलीकी शिक्षा प्राप्त करनेमें बहुत ही उपयोगी है। इसका बंगला अनुवाद भी छप चुका है। बालक बालिकाओंको पहलेसे ही इस पुस्तकको पढ़ना चाहिये। यह पुस्तक ऐसी उपकारी है कि बालक और वृद्ध समानरूपसे इससे साधनविषयक शिक्षा लाभ कर सकते हैं। मूल्य।) चार आना।

शास्त्रसोपान ।

सनातनधर्मके शास्त्रोंका संक्षेप सारांश इस ग्रंथमें वर्णित है। सब शास्त्रोंका कुछ विवरण समझनेके लिये प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बीके लिये यह ग्रंथ बहुत ही उपयोगी है। मूल्य ।) चार आना।

धर्मप्रचारसोपान ।

यह ग्रन्थ धर्मोपदेशक देनेवाले उपदेशक और पौराणिक पण्डितोके लिये बहुत ही हितकारी हैं। मूल्य ≈) आना।

उपदेशपारिजात ।

यह संस्कृत गद्यात्मक अपूर्व ग्रंथ है। सनातनधर्म क्या है, धर्मोपदेश किसको कहते हैं, सनातनधर्मके सब शास्त्रोंमें क्या २ विषय हैं, धर्मवक्ता होनेके लिये किन २ योग्यताओंके होनेकी आवश्यकता है, इत्यादि अनेक विषय इस ग्रन्थमें हैं। संस्कृत विद्वान्मात्रको पढ़ना उचित है, और धर्मवक्ता, धर्मोपदेशक, पौराणिक पण्डित आदिके लिये तो यह ग्रंथ सब समय साथ रखने योग्य है। मूल्य ॥) आठ आना।

कल्किपुराण ।

कल्किपुराणका नाम किसने नहीं सुना है? इस कलियुगमें कल्कि महाराज अवतार धारण कर दुष्टोंका संहार करेंगे, उसका पूर्ण वृत्तान्त है। वर्तमान समयके लिये यह बहुत हितकारी ग्रन्थ है। विशुद्ध हिन्दी अनुवाद और विस्तृत भूमिका सहित यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। धर्मजिज्ञासुमात्रको इस ग्रंथको पढ़ना उचित है। मूल्य १॥)

योगदर्शन ।

हिन्दीभाष्यसहित । इस प्रकारका हिन्दी भाष्य और कहीं प्रकाशित नहीं हुआ है । सब दर्शनोंमें योगदर्शन सर्ववादि-सम्मत दर्शन है और इसमें साधनके द्वारा अन्तर्जगत्‌के सब विषयोंका प्रत्यक्ष अनुभव करा देनेकी प्रणाली रहनेके कारण इसका पाठन और भाष्य एवं टीकानिर्माण वही सुचारुरूपसे कर सकता है, जो योगके क्रियासिद्धांशका पारगामी हो । इस भाष्यके निर्माणमें पाठक उक्त विषयकी पूर्णता देखेंगे । प्रत्येक सूत्रका भाष्य प्रत्येक सूत्रके आदिमें भूमिका देकर ऐसा क्रम-बद्ध बना दिया गया है कि, जिससे पाठकोंको मनोनिवेश-पूर्वक पढ़नेपर कोई असम्बद्धता नहीं मालूम होगी और ऐसा प्रतीत होगा कि, महर्षि सूत्रकारने जीवोंके क्रमाभ्युदय और निःश्रेयसके लिये मानो एक महान् राजपथ निर्माण कर दिया है । इसका द्वितीय संस्करण छपकर तैयार है, इसमें इस भाष्यको और भी अधिक सुस्पष्ट, परिवर्द्धित और सरल किया गया है । मूल्य २) दो रुपया ।

श्रीभारतधर्ममहामण्डलरहस्य ।

इस ग्रंथमें सात अध्याय हैं । यथा–आर्य्यजातिकी दशाका परिवर्त्तन, चिन्ताका कारण, व्याधिनिर्णय, औषधिप्रयोग, सुपथ्यसेवन, बीजरक्षा और महायज्ञसाधन । यह ग्रन्थरत्न हिन्दूजातिकी उन्नतिके विषयका असाधारण ग्रंथ है । प्रत्येक सनातनधर्मावलम्बीको इस ग्रन्थको पढ़ना चाहिये । द्वितीया-वृत्ति छप चुकी है, इसमें बहुतसा विषय बढ़ाया गया है । इस ग्रन्थका आदर सारे भारतवर्षमें समानरूपसे हुआ है । धर्मके गूढ़ तत्त्व भी इसमें बहुत अच्छी तरहसे बताये गये हैं । इसका बंगला अनुवाद भी छप चुका है । मूल्य १।)

निगमागमचन्द्रिका ।

प्रथम और द्वितीय भागकी जो पुस्तकें धर्मानुरागी सज्जनों-को मिल सकती हैं। इन दोनों भागोंमें सनातनधर्मके अनेक गूढ़ रहस्यसम्बन्धी ऐसे ऐसे प्रबन्ध प्रकाशित हुए हैं कि, आज तक वैसे धर्मसम्बन्धी प्रबन्ध और कहीं भी प्रकाशित नहीं हुए हैं। जो धर्मके अनेक रहस्य जान कर तृप्त होना चाहें, वे इन पुस्तकोंको मंगावें। प्रत्येकका मूल्य १)

भक्तिदर्शन ।

श्रीशाण्डिल्य-सूत्रोंपर बहुत विस्तृत हिन्दी भाष्यसहित और एक अति विस्तृत भूमिकासहित यह ग्रंथ प्रणीत हुआ है। हिन्दीका यह एक असाधारण ग्रन्थ है। ऐसा भक्तिसम्बन्धी ग्रन्थ हिन्दीमें पहले प्रकाशित नहीं हुआ था। भगवद्भक्तिके विस्तृत रहस्योंका ज्ञान इस ग्रंथके पाठ करनेसे होता है। भक्तिशास्त्रके समझनेकी इच्छा रखनेवाले और श्रीभगवान्में भक्ति करनेवाले धार्मिक मात्रको इस ग्रन्थको पढ़ना उचित है। मू० १) एक रुपया।

मन्त्रयोगसंहिता ।

भाषानुवादसहित। योगविषयक ऐसा अपूर्व ग्रंथ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ है। इसमें मन्त्रयोग के १६ अङ्ग और क्रमशः उनके लक्षण, साधनप्रणाली आदि सब अच्छी तरहसे वर्णन किये गये हैं। इसमें मंत्रोंका स्वरूप और उपास्य निर्णय बहुत अच्छा किया गया है और अनर्थकारी साम्प्रदायिक विरोधके दूर करनेके लिये यह एक मात्र ग्रंथ है, इसमें नास्तिकोंके मूर्ति पूजा, मन्त्रसिद्धि आदि विषयोंमें जो प्रश्न होते हैं, उनका अच्छा समाधान है।-मूल्य १) एक रु०।

हठयोग संहिता ।

भाषानुवादसहित । योगविषयक ऐसा अपूर्व ग्रंथ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ है। इसमें हठयोगके ७ अङ्ग और क्रमशः उनके लक्षण साधनप्रणाली आदि सब अच्छी तरहसे वर्णन किये गये हैं। गुरु और शिष्य दोनों ही इससे पूरा लाभ उठा सकते हैं। मूल्य ॥।) आ०

तत्त्वबोध ।

भाषानुवाद और वैज्ञानिक टिप्पणीसहित । यह मूल वेदान्त ग्रन्थ श्रीशंकराचार्य्यकृत है। इसका बंगानुवाद भी प्रकाशित हो चुका है। मूल्य ☞) दो आना।

स्तोत्र कुसुमाञ्जली ।

इसमें पञ्चदेवता, अवतार और ब्रह्मकी स्तुतियोंके साथ साथ आजकलकी आवश्यकतानुसार धर्मस्तुति गंगादि पवित्र तीर्थोंकी स्तुति, वेदान्तप्रतिपादक स्तुतियां और काशीके प्रधान देवता श्रीविश्वनाथादिकी स्तुतियां हैं। मू० ।) आना

दैवीमीमांसादर्शन प्रथम भाग ।

वेदके तीन काण्ड हैं। यथाः-कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड। ज्ञानकाण्डका वेदान्तदर्शन, कर्मकाण्डका जैमिनीयदर्शन और भरद्वाजदर्शन और उपासनाकाण्डका यह भक्तिदर्शन है। इसका नाम दैवीमीमांसादर्शन है। यह ग्रंथ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ था। इसके चार पाद हैं, यथाः-प्रथम रसपाद, इस पादमें भक्तिका विस्तारित विज्ञान वर्णित है। दूसरा सृष्टिपाद, तीसरा स्थितिपाद और चौथा लयपाद, इन तीनों पादोंमें दैवीमाया, देवताओंके भेद, उपा-

त्माका विस्तारित वर्णन और भक्ति तथा उपासनासे मुक्ति-की प्राप्तिका सब कुछ विज्ञान वर्णित है इस प्रथम भागमें इस दर्शनशास्त्रके प्रथम दो पाद हिन्दी अनुवाद और हिन्दीभाष्य-सहित प्रकाशित हुए हैं। मूल्य १॥) डेढ़ रुपया।

श्रीमद्भगवद्गीता प्रथमखण्ड।

श्रीगीताजीका अपूर्व्व हिन्दी-भाष्य यह प्रकाशित हो रहा है जिसका प्रथम खण्ड, जिसमें प्रथम अध्याय और द्वितीय अध्यायका कुछ हिस्सा है, प्रकाशित हुआ है। आज तक श्रीगीताजीपर अनेक संस्कृत और हिन्दी-भाष्य प्रकाशित हुए हैं, परन्तु इस प्रकारका भाष्य आज तक किसी भाषामें प्रकाशित नहीं हुआ है। गीताका अध्यात्म, अधिदैव, अधि-भूतरूपी त्रिविध स्वरूप, प्रत्येक श्लोकका त्रिविध अर्थ और सब प्रकारके अधिकारियोंके समझने योग्य गीता-विज्ञानका विस्तारित विवरण इस भाष्यमें मौजूद है। मूल्य १) एक रुपया

सप्त गीताएँ।

पञ्चोपासनाके अनुसार पाँच प्रकारके उपासकोंके लिये पांच गीताएं-श्रीविष्णुगीता, श्रीसूर्य्यगीता, श्रीशक्तिगीता, श्रीधीशगीता और श्रीशम्भुगीता एवं संन्यासियोंके लिये संन्यासगीता और साधकोंके लिये गुरुगीता भाषानुवाद-सहित छप चुकी हैं। श्रीभारतधर्म महामण्डलने इन सात गीताओंका प्रकाशन निम्नलिखित उद्देश्योंसे किया है:-१म, जिस साम्प्रदायिक विरोधने उपासकोंको धर्मके नामसे अधर्म्म सञ्चित करनेकी अवस्थामें पहुंचा दिया है, जिस-साम्प्र-दायिक विरोधने उपासकोंको अहंकार त्यागी होनेके स्थानमें घोर सम्प्रदायिक अहंकारसम्पन्न बना दिया है, भारतको

वर्त्तमान दुर्दशा, जिस साम्प्रदायिक विरोधका प्रत्यक्ष फल है, और जिस साम्प्रदायिक विरोधने साकार उपासकोंमें घोर द्वेषदावानल प्रज्वलित कर दिया है, उस साम्प्रदायिक विरोधका समूल उन्मूलन करना और २ य, उपासनाके नामसे जो अनेक इन्द्रियासक्तिकी चरितार्थताके घोर अनर्थकारी कार्य होते हैं उनका समाजमें अस्तित्व न रहने देना तथा ३ य समाजमें यथार्थ भगवद्भक्तिके प्रचार द्वारा इहलौकिक और पारलौकिक अभ्युदय तथा निः श्रेयस-प्राप्तिमें अनेक सुविधाओंका प्रचार करना। इन सातों गीताओंमें अनेक दार्शनिक तत्त्व, अनेक उपासनाकाण्डके रहस्य और प्रत्येक उपास्य देवकी उपासनासे सम्बन्ध रखनेवाले विषय सुचारुरूपसे प्रतिपादित किये गये हैं। ये सातों गीतायें उपनिषद्रूप हैं। प्रत्येक उपासक अपने उपास्यदेवकी गीतासे तो लाभ उठावेगा ही; किन्तु अन्य चार गीताओंके पाठ करनेसे भी वह अनेक उपासनातत्त्वोंको तथा अनेक वैज्ञानिक रहस्योंको जान सकेगा और उसके अन्तः- करणमें प्रचलित साम्प्रदायिक ग्रंथोंसे जैसा विरोध उदय होता है वैसा नहीं होगा, वह परम शान्तिका अधिकारी हो सकेगा। संन्यासगीतामें सब सम्प्रदायोंके साधु और संन्यासि- योंके लिये सब जानने योग्य विषय सन्निविष्ट हैं। संन्यासिगण इसके पाठ करनेसे विशेष ज्ञान प्राप्तकर सकेंगे। गृहस्थोंके लिये भी यह ग्रन्थ धर्म ज्ञानका भण्डार है। श्रीमहामण्डल- प्रकाशित गुरुगीताके सदृश ग्रन्थ आज तक किसी भाषामें प्रकाशित नहीं हुआ है। इसमें गुरु शिष्यलक्षण, उपासनाका रहस्य और भेद, मन्त्र हठ लय और राजयोगोंके लक्षण और अङ्ग एवं गुरुमहात्म्य, शिष्यकर्तव्य, परम तत्त्वका स्वरूप और गुरुशब्दार्थ आदि सब विषय स्पष्टरूपसे हैं। मूल, स्पष्ट सरल

और सुमधुर भाषानुवाद और वैज्ञानिक टिप्पणी सहित यह ग्रंथ छपा है। गुरु और शिष्य दोनोंके लिये यह उपकारी ग्रन्थ है। चुकी हैं। विष्णुगीताका मूल्य १) सूर्य्यगीताका मूल्य ॥) शक्तिगीताका मूल्य १) धीशगीताका मूल्य ॥।) शंभुगीताका मूल्य १) संन्यासगीताका मूल्य ॥।) और गुरुगीताका मूल्य ।) है। इनमेंसे पञ्चोपासनाकी पांच गीताओंमें एक एक तीनरंगा विष्णुदेव, सूर्य्यदेव, भगवती और गणपतिदेव तथा शिवजीका चित्र भी दिया गया है। शम्भुगीतामें वर्णाश्रमबन्ध नामक चित्र भी देखने योग्य है।

"THE WORLD'S ETERNAL RELIGION"

A Unique work on Hinduism in one volume, containing 24 Chapters with tri-colour illustrations, glossary, etc. No work has hitherto appeared in English that gives in a suggestive manner the real exposition of the Hindu religion in all its phases. The book has perfectly supplied this long-felt want. The names of the chapters are as fllows:—1, Foreword. 2. Universel Religion, 3. Classification of Religion. 4. Law of Karma, 5 Worship in all its phases, 6. Pratice of Yoga through Mantras, 7. Practice of Yoga through physical exersise, 8. Practice of Yoga through finer force of Nature. 9. Yoga through power of reaosoning. 10 The Mystic Circle, 11. Love and Devotion. 12. Planes of Knowledge, 13. Time, space, creation. 14. The Occult world, 15. Evolution and Reincarnation. 15. Hindu Philosophy. 17. The System of Castes and Stages of Life, 18. Woman's Dharma. 19. Image Worship, 20. The great Sacrifices. 28. Hindu Scriptures, 22. Liberation. 23. Education, 24. Reconciliation of all Religons. The followers of all religions in the world will profit by the light the work is intended to give. Price cloth bound, superior edition Rs. 5, Ordinary edition Rs. 3, postage extra.

अन्यान्य पुस्तकें।

वन्देमातरम्)॥।
स्वराज्यप्रश्नोत्तरी -)॥
भारतकी जागती हुई आत्मा -)
गीता रहस्य (तिलकका) -)॥
विद्यार्थी और राजनीतिक आन्दोलन -)
असभ्य रमणी =)
आनन्द रघुनन्दन नाटक ॥)
इश्क दोहावली)।
उपन्यास कुसुम ≡)
कार्त्तिकप्रसादकी जीवनी =)
कृषि विद्या ॥।)
गोवंश-चिकित्सा ।)
गोमाताकी जय -)
दुर्गेश नन्दिनी २ भाग ।=)
देवपूजा प्रयोग -)
धनुर्वेद संहिता ।)
प्रयाग माहात्म्य ॥=)
मानस मञ्जरी ।)
प्रवासी =)
बारहमासी -)
मङ्गलदेव पराजय =)
मेगास्थनीजका भारतवर्षीय वर्णन ॥=)
राम रत्नाकर २)
रसिक विलास ।=)
रामगीता (छोटी) ≡)
बसन्त शृङ्गार ८)

वारेनहेस्टिंगस १)
वैष्णव रहस्य)॥
वीरबाला (उपन्यास) ॥।)
व्रतोत्सवचन्द्रिका (हिन्दु त्यौहारोंका शास्त्रीय विवेचन) ३)
शास्त्रीजीके दो व्याख्यान ॥=)
सिद्धान्त कौमुदी २)
सार मञ्जरी ।)
क्षत्रिय हितैषिणी -)
भूदेव चरित्र १॥)
आचार प्रबन्ध १)
पारिवारिक प्रबन्ध १)
कल्पलतिका बाल चिकित्सा ।)
संक्षिप्त भूदेव चरित्र =)
रामगीता रायल ५)
Lotus Leaves 2-8-0
Hindu Philosophy 3-0-0
English Grammar 0-4-0
Tilak's Message 0-12-0
National Education 0-12-0
Swadeshi (by Mahatma Gandhi) -1-
Five Patriots on Home Rule -1-
Home Rule Questions & Answers -1-
Bureaucratic Lila -1-
Tilak's Great Speech -1-
Warship of the motherland 0-6-0

(१) इनमेंसे जो कमसे कम ४) मूल्यकी पुस्तकें पूरे मूल्यमें खरीदेंगे अथवा स्थिर ग्राहक होनेका चन्दा १) भेज देंगे, उन्हें शेष और आगे प्रकाशित होनेवाली सब पुस्तकें पौने ¾ मूल्यमें दी जायँगी।

(२) स्थिर ग्राहकोंको मालामें प्रकाशित होनेवाली हर एक पुस्तक खरीदनी होगी। जो पुस्तक इस विभाग द्वारा छापी जायगी, वह एक विद्वानोंकी कमेटी द्वारा पसन्द करा ली जायगी।

(३) हर एक ग्राहक अपना नम्बर लिखकर या दिखा कर हमारे कार्य्यालयसे अथवा जहाँ वह रहता हो वहाँ हमारी शाखा हो, तो वहाँसे स्वल्प मूल्यपर पुस्तकें खरीद सकेगा।

(४) जो धर्मसभा इस धर्मकार्य्यमें सहायता करना चाहें और जो सज्जन इस ग्रन्थमालाके स्थायी ग्राहक होना चाहें, वे नीचे लिखे पते पर पत्र भेजनेकी कृपा करें।

मैनेजर, निगमागम बुकडीपो,

भारतधर्म सिंडिकेट लिमिटेड, स्टेशन रोड, बनारस सिटी।